श्रीनिवास बालभारती

परशुराम

हिन्दी अनुवाद

डॉ. के. लीलावती

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति

श्रीनिवास बालभारती - 171

परशुराम

तेलुगु मूल

सिहेच. जमदग्नि शर्मा

हिन्दी अनुवाद

डॉ. के. लीलावती

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्

तिरुपति

2015

Srinivasa Bala Bharati - 171
(Children Series)

PARASURAM

Telugu Version
Ch. Jamadagni Sarma

Hindi Translation
Dr. K. Leelavathy

T.T.D. Religious Publications Series No. 1119
©All Rights Reserved
First Edition - 2015

Copies : 5000

Price :

Published by
Dr. D. SAMBASIVA RAO, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati.

D.T.P:
Office of the Editor-in-Chief
T.T.D, Tirupati.

Printed at :
Tirumala Tirupati Devasthanams Press,
Tirupati.

दो शब्द

बच्चों का हृदय सुमनों की भांति निर्मल होता है। उत्तम कपूर से बढ़कर सुवासित उन के दिलों में बढिया संस्कार पैदा करना है। यदि उन में हम अच्छे संस्कार डालते हैं तो चिरकाल तक आदर्श जीवन बिताने के लिए सुस्थिर नींव पड जाती है। बचपन में संस्कार प्राप्त बच्चे भावी पीढियों के लिए समुचित मार्ग दर्शन कर सकते हैं। इसलिए हमारे इन होनहार बच्चों के लिए हमारी विरासत बने पौराणिक मूल्यों तथा इतिहास में निहित मानवता के मूल्यों का परिचय कराना अत्यंत आवश्यक है।

बिना लक्ष्य का जीवन निष्फल होता है। बच्चों को लक्ष्य की ओर प्रेरित कर उनके जीवन को सही मार्ग पर ले जाने की जिम्मेदारी बडों के ऊपर है। महान व्यक्तियों की आदर्शमय जीवनियों का परिचय करा कर उनमें प्रेरणा जगाने के उद्देश्य से 'श्रीनिवास बालभारती' का शुभारंभ किया गया है।

इस योजना का मुख्य लक्ष्य नैतिक मूल्यों के माधुर्य के बच्चों तथा सर्वत्र फैलाने का है। हमें यह जानकर अत्यंत आनंद हो रहा है कि बच्चे तथा परिवार के सभी लोग इन पुस्तकों का स्वागत कर रहे हैं। इससे तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् का मुख्य उद्देश्य कुछ हद तक सफल हो रहा है।

'श्रीनिवास बालभारती' की योजना तैयार करके उत्तम पुस्तकों का प्रकाशन करवा कर कम कीमत पर सब को उपलब्ध कराने का प्रयास, करनेवाले प्रो.एस.बी. रघुनाथाचार्य अभिनंदनीय हैं।

इस प्रकाशन में सहयोग देनेवाले लेखकों तथा कलाकारों के प्रति मैं अपना धन्यवाद अर्पित करता हूँ।

कार्यकारी अधिकारी
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति

प्राक्कथन

आज के बच्चे कल के नागरिक हैं। अगर वे बचपन में ही महोन्नत सज्ज्ञनों की जीवनियों के बारे में जानकारी लें, तो अपने भावी जीवन को उदात्त धरातल पर उज्ज्वल रूप से जीने के मौके को प्राप्त कर सकते हैं। उन महोन्नत सज्ज्ञनों के जीवन में घटित अनुभवों से हमारी भारतीय संस्कृति, जीवन में आचरणीय मूल धार्मिक सिद्धान्तों तथा नैतिक मूल्यों आदि को वे निश्चय ही सीख सकते हैं। आज की पाठशालाओं में इन विषयों को सिखाने की संभावना नहीं है।

उपरोक्त विषयों को ध्यान में रखकर तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के प्रचुरण विभाग ने डॉ.एस.बी. रघुनाथाचार्य के संपादन में स्थापित ''बाल भारती सीरीस'' के अन्तर्गत विविध लेखकों के द्वारा तेलुगु में रचित ऋषि-मुनियों व महोन्नत सज्ज्ञनों की जीवनियों से संबंधित लगभग १०० पुस्तिकाओं का प्रकाशन किया। इनका पाठकों ने समादर किया और इसी प्रोत्साहन से प्रेरित होकर अन्य भाषाओं में भी इन पुस्तिकाओं के प्रकाशन करने का निर्णय लिया गया। प्रारम्भिक तौर पर इनको अंग्रेजी व हिन्दी भाषाओं में प्रकाशित किया जा रहा है। इनके द्वारा बच्चे व जिज्ञासु पाठकों को अवश्य ही लाभ पहुँचेगा।

इन पुस्तिकाओं के प्रकाशन करने का उद्देश्य यही है कि बच्चे पढें और बडे लोग इनका अध्ययन कर, कहानियों के रूप में इनका वर्णन करें, तद्वारा बच्चों में सृजनात्मक शक्ति को बढा दें। फलस्वरूप बच्चों को अच्छे मार्ग पर चलने की प्रेरणा निश्चय ही बचपन में ही मिलेगी।

एडिटर-इन-चीफ
ति.ति.देवस्थानम्

स्वागत

श्रीनिवासदयोद्भूता बालानां स्फूर्तिदायिनी ।
भारती जयताल्लोके भारतीयगुणोज्ज्वला ।।

जब खण्डान्तरों में सभ्यता की बू तक नहीं थी तब भरतवर्ष अपनी सभ्यता, संस्कार,धर्म, नैतिकाचरण के लिए प्रसिद्ध हो गया था। जो इस पुण्य-भूमि पर जन्मता है वह धर्माचरण में स्थिर होकर अधर्म का सामना करता है और क्रमशः ईश्वराभिमुखी होकर यशोवान होता है। ऐसे महात्माओं के प्रभाव से हमारे जीवन इह-पर दोनों प्रकार लाभान्वित होते हैं। उनके आदर्शमय जीवनों से स्फूर्ति पाता है और समझता है कि मैं इस महान भारत का वारिस हूँ; परंपरागत इस संप्रदाय की रक्षा करना मेरा कर्तव्य है। ऐसी भावना से वह अपने देश की सेवा के लिए तैयार रहता है।

वास्तव में इस देश में कई धर्मात्मा, वीरपुरुष, वीरनारियाँ पैदा हुईं उन्होंने संस्कृति की दृढ नींव डाली है। हमारा भाग्य यही है कि हमारी पैतृक-संपदा के रूप में उज्ज्वल इतिहास की परंपरा है। उनके आदर्शों के पालन करने से ही कोई विद्यावान-विज्ञानी बन सकता है। राष्ट्र के जीवन प्रवाह में वही विज्ञान अचल रहकर जीवन को सुशोभित करता रहता है। इसी सिलासले को आगे बढाने के लिए महात्माओं के जीवनियों को संक्षिप्त रूप में आपके सामने रखता हूँ।

हे भारत के भाग्यदाता बालक-आइए-स्फूर्ति पाइए

एस.बी. रघुनाथाचार्य
प्रधान संपादक

परिचय

हमें जन्म देने वाली माँ से बढ़कर कोई भगवान नहीं है। अन्य सभी उनके बाद ही परिगणना में ली जाती हैं। ऐसी माँ का ऋण चुकाना हम सबका कर्तव्य बनता है। एक महान पुरुष अपने पिता की कठोर आज्ञा का पालन करते हुए माँ के सिर को काटने में भी पीछे नहीं हटे। इतना ही नहीं, बिना किसी सवाल जवाब किये पिता की आज्ञा का पालन करने वाले पुत्र को देखकर जब पिता ने वर मागंने के लिए कहा तो उस धीर ने अपनी इच्छा प्रकट की कि ''पहले मेरी माँ को जीवन दान दीजिए।'' आप जानते हैं, वे कौन हैं? वे ही श्री महाविष्णु के छठवें अवतार हैं। हठ और पौरुष का दूसरा नाम ही परशुराम है।

निस्सहाय स्थिति में पति मारे गये है, इसी शोक में रेणुका देवी अपने पुत्र को इक्कीस बार ''राम राम'' कहकर आवाज देती हैं। उस पुकार को सुन कर भूमि के भार बने हुए दुष्ट क्षत्रियों को चुन चुन कर इक्कीस बार अपनी परशु की बली चढाते हुए ''इदं ब्राह्ममिदं क्षात्रं'' के कथन की सच्चाई को चारों ओर फैलाने में समर्थ हुए हैं भार्गव राम। उनके हठ और पौरुष गुणों को हमें आदर्श रूप में लेने चाहिए। उनसे यही प्रेरणा हमें मिलनी चाहिए कि हम अधर्म का नाश कर सकें।

- प्रधान संपादक

परशुराम

राम का अर्थ है

अगर पूछा जाय कि अत्यंत प्रचलित नाम कौन सा है? तब सबके मुँह से राम का नाम ही निकलता है। यह नाम ही इतना मीठा है। इतनी प्रसिद्धि पा चुकी है। यह नाम सभी वेदों का सार है। विष्णु मंत्र से 'रा' शब्द, शिव मंत्र से 'म' शब्द, उन दोनों के मिलन से 'राम' शब्द बना है। कहा जाता है कि हम जब 'रा' शब्द का उच्चारण करते है तो उसी समय हमारे अंदर से सारे पाप बाहर चले जाते हैं। फिर तुरंत 'म' शब्द का उच्चारण होता है तो होंठ बंद हो जाते हैं। इस कारण वे लौटकर हमारे मन के अंदर आ नहीं सकते। एक बार ही सही राम का नाम लेने से सभी पाप धुल जाते हैं और फिर कभी वे लौट कर आते नहीं। तो बार-बार राम नाम का स्मरण करने से, चूंकि पाप तो कब के धुल चुके हैं, इस कारण न जाने कितना पुण्य प्राप्त होगा, इसे कौन बता पायेंगे।

रामावतार

इसी कारण कई भक्त जैसे रामदास, तुलसीदास, त्यागय्या, पोतना आदि हिन्दू ही नहीं बल्कि कबीर, तानीशा आदि अन्य धर्मों के भक्त जन भी राम भक्ति में तन्मय हुए। इसी नाम को उल्टे रूप में स्मरण करने का उपदेश पाकर अत्यंत पापी भी एक स्थान पर बैठकर तपस्या करने लगा। उसके चारों ओर बांबी बढ़ती गयी। उसके बाद उस बांबी से बाहर निकलने वाला महान व्यक्ति ही वाल्मीकी है। इन्होंने रामायण लिखकर उस नाम को चारों ओर प्रचार कर पाये। रामायण के कथा नायक राम दशरथ के बडे पुत्र हैं। जब सारे देवतागणों ने रावण वध करने की प्रार्थना श्री महाविष्णु से की, तब उन्होंने जाना कि यह कार्य तो केवल

मानव शरीर के माध्यम से ही हो सकता है, क्योंकि ब्रह्मा द्वारा रावण को दिया गया वर ऐसा ही था। इसलिए वे राम दशरथ के पुत्र राम, लक्ष्मण,भरत, शत्रुघ्न भाई बनकर जन्म लिए। इन चारों भाइयों के मिलने पर ही विष्णु का अवतार समग्र बन पाएगा। फिर भी राम अधिक अंश से जन्म लेने के कारण धर्म के नाम से जाने वाले परम उत्तम जीवन को बिताकर स्वयं ही पूर्णावतार के रूप में प्रसिद्धि पा चुके।

तीन राम

उस राम के जन्म के पहले ही राम नाम था। उनसे पहले ही एक अन्य राम थे। वे राम भी विष्णु के अवतार हैं। एक ही नाम से दो अवतारों का उद्भव हुआ है। इस कारण उनके प्रधान शस्त्रों द्वारा ही उन्हें जाना जा सकता है। पहले राम को परशुराम दूसरे राम को धनुर्धारी राम कहकर समाज पुकारने लगा। परशुराम भृगुवंश के हैं। इस कारण इन्हें भार्गवराम भी कहते हैं। धनुर्धारी राम इक्ष्वाकु वंशज हैं। उस वंश में प्रसिद्धि पानेवाले राजा रघु हैं। इक्ष्वाकु राम कहें, या रघुराम कहें, पट्टाभि राम कहें, श्री रामचन्द्र कहें, या दशरथ राम कहें, ये सभी नाम धनुर्धारी राम के ही नाम हैं। इन दोनों के अलावा और एक राम है। श्री कृष्ण के भाई बलराम। ये अपने बल के कारण ही बलराम कहलाए। उन्होंने शेष नाग का अवतार धारण कर श्री कृष्ण की सहायता की।

राक्षस का अर्थ

आखिर भगवान अवतार क्यों धारण करते हैं? मानवों में जब धर्म का नाश होता है और अधर्म बढ़ जाए तब भगवान किसी न किसी रूप में अवतार धारण कर अधर्म का निर्मूलन कर धर्म की स्थापना करने में सहायता करते हैं। इस संसार में पशु-पक्षी, कीड़े-मकौड़े जन्म लेते हैं और

मरते हैं। उनके द्वारा करने के लिए पाप- पुण्य कार्य होते ही नहीं। मानव जीवन धारण कर महान पाप कार्य के कारण ही इस प्रकार के जन्म को लेते हैं। पाप कार्य हो या पुण्य कार्य, वह केवल मानव ही कर सकते हैं। राक्षस का मतलब है वह मानव जो घोर पाप कार्य करते हैं। पुराने युगों में उनके भयंकर और विकृत रूप हुआ करते थे। उनको देखते ही कोई भी पहचान लेते थे कि ये राक्षस है। जिनमें धैर्य और साहस है वे उनका सामना करते थे। जिनमें ये गुण नहीं होते वे दूर ही रह जाते थे। या फिर राक्षसों के शिकार हो जाते थे। धीरे-धीरे वे भी मनुष्य समान ही दिखाई देने लगे। द्वापर युग में कई राक्षस ऐसे थे जिन्के विकृत रूप नहीं थे। जैसे शिशुपाल, जरासंध, कंस आदि साधारण मनुष्य जैसे ही दिखाई देते थे। इस कारण उन्हें पहचानने में कठिनाई हो जाती थी।

जन्म

त्रेता युग के आखरी चरण में परशुराम के अवतरित होने के समय तक, राज वंशों में अनेक राक्षसों ने जन्म लिया और वे कई अधर्म करते हुए भूदेवी के लिए भार बन चुके थे। उस समय भगवान ने निश्चय कर लिया कि दुष्ट क्षत्रियों का संहार कर, धर्म की स्थापना कर, शिष्ट लोगों की रक्षा करेंगे। उस समय उन्होंने भृगुवंश को चुना और प्रसिद्धि पाने वाले जमदग्नि मुनि के पाँचवे पुत्र के रूप में जन्म लिया।

महान कौन?

भगवान द्वारा चुना भृगुवंश अत्यंत विशिष्ट माना जाता है। उस वंश के मूल पुरुष भृगु महर्षि चतुर्मुख ब्रह्मा के हृदय से उद्भूत हुए। वे अपनी तपस्या के बल पर इतने महान हुए कि जब ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, इन तीनों में कौन महान है का प्रश्न जब उठा तब सभी ऋषियों ने मुक्त कंठ

से भृगुमहर्षि से प्रार्थना की कि ''हे ऋषि! आप ही इसके लिए समर्थ हैं। त्रिमूर्तियों की परीक्षा लेकर आप अपने निर्णय को हमें बताइए।'' वे समर्थ हैं, इसलिए मुनियों ने उनसे प्रार्थना की और उन्होंने भी अपने सामर्थ्य का निरूपण किया। उनकी परीक्षा में निरूपित हुआ कि विष्णु ही कसूरवार हैं। उस विष्णु को ही शाप देने का सामर्थ्य उनमें था। महालक्ष्मी को ही अपनी बेटी बनाकर उन्हें भार्गवी नाम से प्रसिद्धि भी दिला पाए।

पुलोम राख बन चुके

भृगु ऋषि के कई पत्नियाँ हैं। उनमें एक है पुलोमा। जब वे गर्भवती थी, एक बार अग्नि की सेवा करते समय पुलोम नामक राक्षस वहाँ आए और उन्होंने अग्नि देव से पूछा कि ये स्त्री कौन हैं? अग्नि देवता ने सच बताया कि वे भृगु महर्षि की पत्नी हैं। उस समय उस राक्षस ने उन्हें जबरदस्ती ले जाने का प्रयत्न किया। तब वे बहुत डर गई। उसी समय उनके गर्भ का बच्चा फिसल कर नीचे गिरा। माँ के गर्भ से फिसलने के कारण उस पुत्र का नाम च्यवन पड़ गया। जन्म से ही वह बालक अत्यंत तेजस्वी था। उसी तेज के कारण पुलोम राक्षस राख हो गया। च्यवन इतना तेज संपन्न था।

बडबाग्नि का अर्थ है

जब च्यवन मुनि की पत्नी गर्भवती थी उन दिनों कृतवीर्य वंश के लोग भार्गव वंश के लोगों को सताया करते थे। अपने पीछे पड़ने वालों को धोखा देने निमित्त उस स्त्री ने अपने गर्भ को ही जाँघ में रखकर उन्हें विश्वास दिलाने लगीं कि वे गर्भवती नहीं है। जाँघ को संस्कृत में ऊरू

कहते हैं। माँ के ऊरू से जन्म लेने के कारण च्यवन मुनि के पुत्र का नाम और्वानला रखा गया। इस बालक के तेजस्व को देख न सकने के कारण कृतवीर्य का पूरा वंश अंधा हो गया। आज भी समुद्र के गर्भ में रहनेवाली मादा घोडी के रूप में जो अग्नि है वह इन्हीं के तपो बल से जन्म लेने के कारण उसे भी और्वानल नाम से जाना जाता है। मादा घोडे को बडबा कहते हैं। इसलिए बडबाग्नि का अर्थ भी वही है। इस महापुरुष का पुत्र ही ऋचीक है। भार्गव वंश के इतिहास में ऋचीक की अत्यधिक विशेषता है। परशुराम के जन्म में भी उनकी तपः शक्ति के ही अत्यधिक मिलते हैं।

हजार घोड़ों की आवश्यकता है

मुनि ऋचीक ने गार्हस्थ्य जीवन की कामना कर महाराज गाधि के पास जाकर उनकी बेटी सत्यवती का हाथ माँगा। अपनी प्यारी बेटी का हाथ इस दाढी-मूँछों वाले ऋषि को देना उन्हें अच्छा नहीं लगा। ये बात सुनकर क्या मुनि चुप रह पाएँगे? फिर भी उन्हें ये भी डर कि शाप देकर मुनि उन्हें सर्वनाश कर सकते हैं। इस कारण वे मुनि को कोई असाधारण कार्य सौंपना चाहा। इसलिए उन्होंने मुनि से हजार घोडी की मांग की, जिनका एक कान काला हो, और बाकी पूरा शरीर सफेद हो। तभी वे अपनी बेटी का हाथ उन्हें दे सकते हैं। राजा ने सोचा कि मुनि ऐसे घोडे कभी ला नहीं पाएँगे और उन पर अपनी बेटी का हाथ मुनि को सौंपने की नौबत नहीं आएगी। लेकिन ऋचीक मुनि कोई साधारण मुनि तो नहीं हैं। उन्होंने अपने तपोबल से वरुण भगवान को प्रसन्न कर उनकी कृपा से हजार घोड़ों को पा लिये। फिर उन्हें ले जाकर गाधिराज को देकर, उनकी पुत्री सत्यवती से विवाह किया।

अच्छी दुहिता

सत्यवती बहुत ही योग्य स्त्री है। जब मुनि ऋचीक ने आकर पिता से उसका हाथ माँगा उसी समय उसने निश्चय कर लिया कि वे उन्हीं के पत्नी बनेगी। जब पिता ने उन्हें घोड़ों के बहाने भेज दिया तब वे काफी चिंतित हुई। घोड़ों के साथ वे जब वापस आए तो बहुत ही आनंदित हुई। सत्यवती देवी ने ऋचीक महर्षि से हृदयपूर्वक आराधना की और उन्हें सदा सुख ही पहुँचाया। ऋचीक मुनि अपनी पत्नी से संतुष्ट होकर कहा कि जो भी तुम्हारी इच्छा है उस प्रकार का एक वर माँगो।'' लेकिन प्यार करने वाली पति को पाने के बाद उस पत्नी को और क्या चाहिए? फिर भी उन्होंने एक उत्तम पुत्र की कामना की, और उसके साथ ही अपनी माँ को भी एक पुत्र दिलाने की प्रार्थना की। राजा गाधि की वे इकलौती बेटी थीं। वे सदा चिंतित हुआ करती थी कि राजा का कोई पुत्र संतान नहीं है, और उसे भी कोई भाई नहीं है। दूर रहकर भी मायके की हित चाहने वाली पुत्री को दुहिता कहा जाता है। सत्यवती ने बिल्कुल दुहिता जैसे ही आचरण भी किया।

ऋचीक का यज्ञ

मुनि ऋचीक के लिए कोई भी कार्य असाध्य नहीं है। जब पतिव्रता स्त्री पुत्र की कामना करती है तो यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि वह पुत्र, पिता के समान ही होना चाहिए। भार्गव वंश के लोग ब्राह्मण हैं। अत्यंत तपोबल संपन्न है। इतना ही नहीं उन सभी ने क्षत्रिय वंश की स्त्रियों से ही विवाह किया था। सत्यवती देवी गाधि राजा की बेटी हैं और ऋचीक मुनि से शादी कर चुकी हैं। इसलिए वे एक ज्ञानि पुत्र की माँ बन सकती हैं। उनकी माता महाराज की पत्नी भी अपने लिए तेजो संपन्न

पुत्र की ही कामना करेंगी। इस कारण मुनि ऋचीक ने पुत्र की कामना हेतु एक महायज्ञ प्रारंभ किया। ब्रह्मज्ञानी और क्षत्रिय वीर को जन्म देने के लिए आवश्यक 'चरूऊ' (होम के निमित्त पकाए गये अन्न) को, मंत्र प्रेरित जल से भरे कलशों को अलग-अलग तैयार करके रखे। फिर पत्नी को बुलाकर उन्हें ये दिखाते हुए उन्होंने स्पष्ट किया कि ''तुम इस चरूऊ का उपयोग करो और इस कलश का जल ही पीओ। तुम्हारी माता को दूसरा चरूऊ दो, और दूसरे कलश के पानी को ही उन्हें लेने के लिए कहो। लेने से पहले तुम स्नान करके गूलर के पेड़ से आलिंगन करो और अपनी माँ से कहो कि वे पीपल के पेड से आलिंगन करें।'' इस प्रकार अच्छी तरह से समझाकर स्वयं स्नान करने नदी की ओर चले गए।

यज्ञ प्रसाद हेर-फेर हो गया

सत्यवती देवी की आनंद की सीमा नहीं रही। जल्दी से जाकर पति द्वारा कहे गये सभी विषयों को उन्होंने अपनी माँ से कहा। वे भी बहुत खुश हुई। लेकिन भगवान की लीलाएँ अत्यंत विचित्र होती हैं। अपने मन की इच्छा पूरी होने जा रही है, सोचकर उस आनंद में तन्मय होने वाली माँ-बेटी ने भूल से एक-दूसरे के चीजों का उपयोग किया। सत्यवती ने जाकर पीपल के पेड से आलिंगन किया और अपनी माँ से कहा कि वे जाकर गूलर पेड से आलिंगन करे। सभी कार्य महर्षि के द्वारा कहे गये कार्यों के विरूद्ध ही घटित हुए। स्नान समाप्त कर मुनि ऋचीक आए। आते ही सत्यवती को देखकर आश्चर्यचकित हुए फिर सारे विषयों की जानकारी पाकर उसके फल को उन्होंने इस प्रकार बताया। ''तुम ने जो गलती की है उसके कारण तुम से जिस बच्चे का जन्म होगा वह ब्राह्मण होते हुए भी अत्यंत क्रूर बनेगा। आपकी माता के गर्भ से जन्म लेने वाला

बच्चा क्षत्रिय होने के बावजूद भी अत्यंत शांत स्वभाव का होगा।'' ये बाते सुनकर सत्यवती देवी घबरा गयीं और पति के चरणों पर गिर पड़ी। फिर उन्होंने पति से प्रार्थना की कि 'हे स्वामी! आपके तपोबल के सामने कुछ भी असाध्य नहीं है। मेरा पुत्र क्रूर हो इसे मैं सहन नहीं कर पाऊँगी। मेरी गलती को माफ कर मुझ पर कृपा कर मेरे बेटे को क्रूर मत बनाइए। अगर आप सोचते हैं कि इस बात को टाला नहीं जा सकता है तो फिर मेरे पोते को क्रूर बनाइए।

परशुराम का जन्म

सत्यवती देवी के प्रति अपार अनुराग पूर्ण प्रेम होने के कारण महर्षि ने ऐसा ही परिवर्तन किया। इस कारण सत्यवती देवी के गर्भ से अत्यंत शांत स्वभाव वाले जमदग्नि महर्षि का जन्म हुआ। इनके माता के गर्भ से विश्वामित्र महर्षि का जन्म हुआ। इस प्रकार जमदग्नि के मामा मुनि विश्वामित्र हुए। वे क्षत्रिय होने के बावजूद भी गायत्री महामंत्र की उपासना कर ब्रह्मर्षि बने। इसके पीछे ऋचीक महर्षि के तपोबल का प्रभाव रहा है। सभी क्षत्रिय ब्रह्मर्षि नहीं बन पाते। विश्वामित्र के पीछे इतनी शक्ति होने के बावजूद भी वे अनायास ही ब्रह्मर्षि नहीं बने कई हजार सालों की तपस्या के बावजूद भी एक बार, काम के कारण और फिर दूसरी बार अहंकार के कारण, फिर और एक बार क्रोध के कारण ब्रह्मर्षि बनने में उन्हें असफलता ही मिली। अंत में वे किसी प्रकार ब्रह्मर्षि बन पाए। यह भी ऋचीक महर्षि के तपोबल का साथ होने के कारण ही वे ब्रह्मर्षि बन पाए।

सगी माँ की कृपा के कारण शांत स्वभाववाले महर्षि जमदग्नि के लिए पुत्री रेणुका देवी पत्नी बन पाई। उन्होंने पाँच पुत्रों को जन्म दिया। उनका अंतिम संतान ही परशुराम हैं।

दैवी संकल्प

दुष्ट क्षत्रियों के संहार करने निमित्त मानव रूप में भगवान अवतरित हुए। इस इच्छा की पूर्ति के लिए, खास व्यक्तियों को माता-पिता के रूप में चुनने के पीछे भी एक विशेष कारण है। भगवान चाहे कितना ही सर्वशक्ति संपन्न हों, फिर भी स्वनिर्मित नियमों का उल्लंघन करने की छूट उनके लिए भी नहीं है। अधर्म को सहन ना करने के स्वभाव को पाने के लिए ब्राह्मण होना चाहिए। अगर वे शुद्ध ब्राह्मण हैं तब उन्हें मारने वाले शत्रु को भी वे परब्रह्म रूप से देख पाएंगे। लेकिन उनके विरुद्ध वे कुछ भी नहीं कर पाएँगे। दुष्टों का संहार करने के लिए चाहे कितना भी वीर क्यों न हो उस वीर का मुकाबला करने के लिए पराक्रमी क्षत्रिय का होना आवश्यक है। उसके लिए वे अगर शुद्ध क्षत्रिय के रूप में जन्म लें तो फिर उन्हें भी थोडा बहुत अधर्म तो सहन करना ही पडता है। अगर इस अवतार के प्रयोजन की सिद्धि चाहते हैं तो ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता है, जिनमें अधर्म को बिलकुल ही सह न सकने जैसे ब्राह्मणों के गुण हो और साथ-साथ किसी की परवाह न करने वाले पराक्रमी क्षत्रिय के गुण भी हों। उसी कारण ''शापादपी शरादपी'' की सूक्ति की तरह एक ओर तपोबल दूसरी ओर भुजबल दोनों समृद्ध रूप से पाए जाने वाले भार्गववंश में ऋचीक महर्षि के तपोबल से जन्म लेने वाले शांत स्वभावी जमदग्नि महर्षि के पांचवे पुत्र के रूप में जन्म लिये। चरुऊ कलशों के हेरा-फेरी के कारण और सत्यवती देवी की प्रार्थना दोनों दैव संकल्प के कारण ही हुए हैं। चरुऊ कलशों के उपयोग में हेरा-फेरी हो गयी है। इसी कारण परम क्रूर और परम शांत स्वभाव के रूप में आविर्भाव होने का मौका मिला। जमदग्नि के जन्म के समय तक दुष्ट क्षत्रियों के संहार कार्य के लिए समय परिपक्व नहीं हुआ। उसी कारण सत्यवतीदेवी के प्रार्थना के बहाने, पोते

के रूप में जन्म लेना पड़ा। आखिरी संतान के रूप में जन्म लेने के पीछे भी समय की मांग और लक्ष्य सिद्धि की प्राप्ति ही कारण थे। मानव के रूप में अवतरित भगवान भी मानव जैसे ही बरताव करते हैं। फिर भी वे भगवान होने के कारण औरों से ज्यादा उनमें कुछ विशेषताएँ पाई जाती हैं। इन विशेषताओं के कारण ही स्वयं भगवान होने का एहसास सभी लोगों को करवाते हैं।

दृढ़ संकल्प का दूसरा नाम

जमदग्नि महर्षि का पांचवा पुत्र राम के नाम से अवतरित भगवान अपने बाल्यकाल से ही अत्यंत उत्तम जीवन यापन करते थे। माता-पिता के लिए वे प्रिय पुत्र हैं। गुरुकुल में जाकर वेद-वेदांगो का पठन कर वंश के अनुकूल महातपस्वी बन गए। उनके समय तक जीवित रहने वाले, उनके ही वंश के मूल पुरुष भृगुमहर्षि की सूचनाओं का अनुसरण कर उन्होंने शिव की तपस्या की। उस समय वे केवल १६ साल के होंगे। सारे शरीर में भस्म लेपकर, रुद्राक्ष माला पहनकर, ब्रह्मतेज से प्रकाशित होकर, कंधों पर कृष्ण हिरण के चमडे के साथ वे ऐसे दिखते थे जैसे मनुष्य रूप धारण करने वाले साक्षात शिव। विष्णु के अंश से जन्म लेने वाले शिव की तरह दिखाई देने पर लोगों में यह विश्वास जम गया कि शिव-केशव एक ही है। उस उम्र में ही उनका दृढ संकल्प, धर्म निष्ठा, साहस आदि उत्तम गुण अपनी चरम सीमा को पार कर चुके थे।

जिनके लिए कोई नहीं है उनके लिए भगवान ही सहारा बनते हैं

एक बार जब वे जंगल में घूम रहे थे तब उन्होंने देखा एक बड़ा सा शेर एक छोटे से लडके पर कूदने जा रहा था। उस दृश्य को देखते ही राम ने अपने बाण से उस शेर को मार डाला। तब वह शेर शाप से मुक्ति

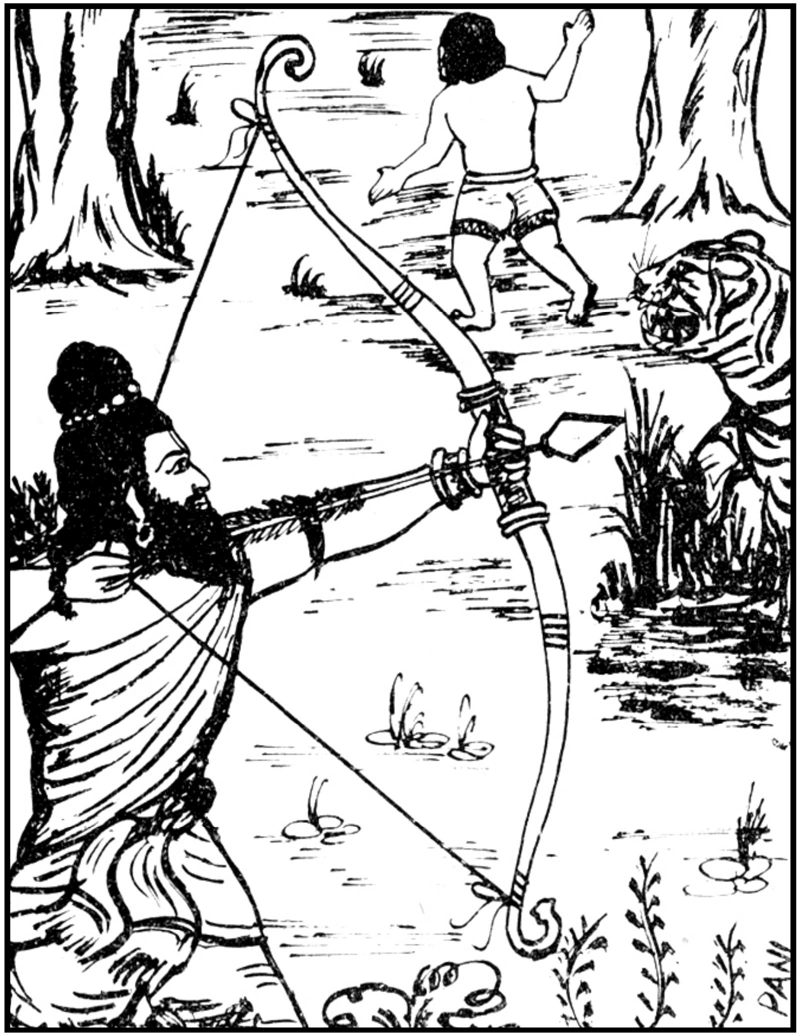

पाकर गंधर्व का रूप धारण कर उन्हें कृतज्ञता ज्ञापित कर अदृश्य हो गया। भय कंपित उस लडके को अभयदान देकर राम ने उसकी रक्षा की। इसका अर्थ यही है कि जिनके लिए कोई सहारा नहीं होता है, उनके लिए भगवान ही सहारा होते हैं। अपनी रक्षा न कर सकने में असमर्थ उस लडके को शेर का शिकार होने से बचाकर स्वयं उस लडके के लिए भगवान बनकर उन्होंने उसकी रक्षा की। कल के दिन हमारी भी ऐसी हालत हो सकती है। विपदा काल में विश्वास के साथ भगवान का स्मरण कर सके तो उस लडके को राम ने जिस प्रकार रक्षा की उसी प्रकार हममें से कोई एक व्यक्ति भगवान का रूप धारण कर हमारी भी रक्षा करेंगे। बाल्यकाल में राम की रक्षा पाकर जो बच्चा बडा हुआ वही बाद में महर्षि बनकर परशुराम का सन्निहित हो गया। वे ही अकृतव्रण हैं। राम की रक्षा के कारण वे घायल नहीं हुए इसी कारण उन्हें यह नाम मिला।

मेरे जैसा तप करो

शिव के लिए तपस्या करने वाले राम को स्वयं शिव ने ही उनकी परीक्षा लेना चाहा। एक भील के रूप में धनुष-बाण धारण कर कुत्तों को साथ लिए राम के पास आए जहाँ वे तपस्या कर रहे थे। पहले राम ने उन्हें देखा नहीं। वे अपनी ही तपस्या में मग्न थे। कुत्ते भौंकने लगे तो भील उन्हें रोकने लगा। इस बीच राम की तपस्या भंग हुई और उन्होंने उस भील की ओर देखा। सोचा कोई साधारण भील है। इस कारण उन्होंने कहा ''मैं यहाँ तपस्या कर रहा हूँ। तुम आकर मेरे पास खडे हुए हो। तुम्हारे कारण मेरी तपस्या भंग हो रही है। कृपा करके दूर चले जाइए। वरना उस वेश को और इन कुत्तों को छोडकर मेरे जैसा तपस्या करो।'' यह है उनका स्वभाव। मन में जो भी बात होती है उसे किसी के

भी सामने कह डालते हैं। अधर्म कहीं भी हो तो वहाँ चाहे भगवान ही क्यों ना हो उनको सुधारना ही उनका लक्ष्य बन जाता है।

तुमको मैं धनुर्विद्या सिखाऊँगा

यह सुनकर वह भील गया नहीं उल्टा राम के साथ बहस करने लगा। काफी समय तक यह विवाद चलता रहा। उस विवाद में कई विचित्र अंश चर्चित हुए। तब राम को समझ में आ गया कि इनके साथ वाद-विवाद करने वाला व्यक्ति साधारण भील नहीं है। शिव ही इस रूप में आए होंगे, यह सोचकर उनके चरणों को प्रणाम करने लगे। तब स्वयं शिव अपना निज रूप धारण कर परशुराम के सारे बदन पर प्रेम से हाथ फेरते हुए, प्रेम पूर्वक कहने लगे ''हे वत्स! तुम उम्र मे काफी छोटे हो लेकिन तुम्हें एक महान कार्य करना है। इसके लिए तुम्हें रौद्रास्त्र की जरूरत होगी। लेकिन इस उम्र में तुम उसे धारण नहीं कर पाओगे, कुछ समय तक तीर्थयात्रा कर लोकानुभव पाकर पुनः मेरी तपस्या करो। उस समय मैं तुम्हें कैलास ले जाकर वहीं तुम्हें संपूर्ण धनुर्वेद सिखाकर रौद्रास्त्र अनुग्रह करूँगा।''

इस लोक से मुझे क्या लेना-देना

भगवान शिव के आदेश को ग्रहण कर राम तीर्थयात्रा करने लगे। कोई ऐसा तीर्थ स्थान नहीं है जहाँ वे नहीं गए हैं। संपूर्ण तीर्थ यात्रा को समाप्त करने में उन्हें दो, तीन साल लगे। बहुत अनुभव भी प्राप्त कर चुके। लोगों की मनःप्रवृत्तियाँ कितने प्रकार की होती हैं सब उन्हें अवगत हो गये। ''गतानुगतिको लोकः न लोकः पारमार्थिकः'' अर्थात् सौ में से नब्बे लोगों की यही दशा होती है कि वे जो काम करते हैं उन्हें खुद नहीं मालूम होता वे क्या कर रहे हैं। एक-दूसरे को देखकर वे लोग भी बकरियों की तरह आगे जाने वाले लोगों का अंधा अनुसरण करते रहते

हैं। लेकिन उसका परमार्थ क्या है किसी को जानने की आवश्यकता ही नहीं होती। कुछ लोग होते हैं, वे स्वतंत्र रूप से सोचते हैं। आप पूछ सकते हैं कि ''अपने कर्तव्य को जानकर काम करने वाले लोग भी होते हैं न?'' उनमें भी परलोक का ध्यान नहीं होता। केवल इह लोक की विलासताओं को पाने की चाह ही उनमें दिखाई देती है। ऐसे लोगों से मुझे क्या लेना देना है, सोचकर शिव की बातें याद कर फिर से वे तपस्या में लीन हो गये।

कैलाश में शिक्षा-दीक्षा

इस बार भगवान शिव जल्दी ही प्रत्यक्ष हुए राम को वे स्वयं अपने साथ कैलाश ले गए। वहीं आश्रय देकर धनुर्विद्या उन्होंने उन्हें सिखायी। वहाँ गणपति और कुमारस्वामी भी उनके समवयस्क होने के कारण वे तीनों सहपाठी हुए। पार्वती-परमेश्वर ने भी राम को अपने पुत्रों के समान ही देखभाल किया। वहाँ की विशेषताओं को देखकर कोई भी आनंदित हो सकते हैं, लेकिन उनका वर्णन करने में असमर्थ हो जाते हैं। राम वहाँ भगवान शिव के पुत्रों के वाहनों के साथ अत्यंत उत्साहित होकर खेला करते थे। भगवान शिव के पुत्र होने पर भी वे भी तो बच्चे ही हैं उन्हें भी गुस्सा आता था। इस कारण कभी-कभी वे भी मुँह फेर लेते थे। फिर भी जल्दी ही मिल जाते थे। कभी-कभी राम उनसे भी आगे निकल जाते थे। यह उनकी ईर्ष्या का कारण भी बनता था। ऐसे समय में पार्वती-परमेश्वर अपने बच्चों को सही सीख देते थे।

राम-परशुराम बन गये

राम अपने सद्व्यवहार के कारण भगवान शिव के कृपापात्र बने। उन्होंने उनसे संपूर्ण धनुर्विद्या सीखी। रौद्रास्त्र का उपदेश भी उन्होंने पाया। भगवान शिव ने अत्यंत महिमावान परशु भी देकर उन्हें अनुग्रह

किया, ताकि उनको अपने अवतार के प्रयोजन की सिद्धि मिल सके। लयकार भगवान शिव खंड परशु को धारण करते हैं। यहाँ राम को भी लय ही करना है। इस तरह शिव ने अपने शिष्य को अपना चिह्न देकर अनुग्रह किया। परशु का अर्थ है कुठार। समीप व्यक्ति को मारने के लिए यही एक अनुकूल शस्त्र है। राम ने इसी का प्रयोग अधिक किया। इसी कारण वे परशुराम के नाम से प्रख्यात हुए। यहाँ केवल एक ही अंतर पाया जाता है वह यह है कि भगवान शिव के हाथ में टूटा हुआ परशु है तो राम के हाथ में अच्छा परशु। आखिर भगवान शिव भी अच्छे कुठार को ही ले सकते हैं ना, खंड परशु का धारण उन्होंने क्यों किया? शायद संपूर्ण विश्व को लय करने के लिए खंड परशु की ही आवश्यकता हो सकती है।

इस प्रकार कैलाश में स्वयं भगवान शिव से ही संहार करने की शिक्षा पाकर राम अपने अवतार के प्रयोजन को पाने के लिए सामर्थ्य हासिल कर भूलोक आए और अपने माता-पिता की सेवा में संलग्न हो गए। कार्य पूर्ति के लिए उचित समझ की जरूरत होती है।

उस समय तक कई राजा अधर्म मार्ग पर चलने लगे, और फिर सभी में दया-सहृदयता की भावनाएँ मिट गयी। नैतिक मूल्य अदृश्य हो गये। प्रजा की रक्षा करने के बजाय उन्हें भक्षित करते हुए वे अत्यंत क्रूर हो गए। इस प्रकार बरबाद होते हुए राजाओं को राम तुरंत ही सजा दे सकते हैं ना? वे अवतारी इसलिए तो हुए हैं। ये बात ठीक है। फिर भी मानव शरीर धारण करने के कारण उन्हें उस समय तक रुकना पडता है जब तक कोई ऐसा अधर्म कार्य हो जिससे उनका क्रोध उबल पड़े।

रावण संहार के लिए श्रीरामचन्द्र अवतरित हुए। विश्वामित्र से सर्वशस्त्रों का उपदेश पाकर जगत के धनुर्धारी बनकर उस कार्य को पूर्ण

करने में समर्थ हुए। फिर भी वे तुरंत रावण से युद्ध करने नहीं गए। रावण की दुष्टता के कारण जब सभी लोकों में उत्पात मच गया था तब भी वे नहीं गए। क्यों? उन्होंने भी परशुराम का ही अनुसरण किया। रावण के द्वारा जब तक उन्हें हानि नहीं पहुँची अर्थात् सीतापहरण होने तक वे आगे नहीं बढ़े। अगर इससे पहले ही श्रीराम रावण से युद्ध करने जाते तो लोग अवश्य प्रश्न करते कि ''रावण ने आप के साथ क्या अपकार किया कि आप उनसे युद्ध करने चल पडे हो।'' अगर यही बात सीताजी के अपहरण के बाद होती तो राम कह सकते हैं कि ''मेरी पत्नी का अपहरण करने वाले दुष्ट का सर्वनाश करूँगा।'' उस समय उनके ऊपर कोई भी आरोप नहीं लगा सकते। इसी तरह परशुराम भी समय के साथ ही आगे बढ़े उसी मार्ग का अनुसरण श्रीरामचन्द्रजी ने भी किया।

उनका सामना कोई नहीं कर सकते

हैहय वंश के कार्तवीर्य लगभग दो-तीन पीढ़ियों से भार्गव वंश को सताते रहे हैं। यह हम पहले ही जान चुके हैं कि च्यवन के पुत्र और्वु बने इसके पीछे कार्तवीर्य का ही हाथ है। कार्तवीर्यार्जुन भी इनसे ही संबंधित है। वे भी कोई साधारण व्यक्ति नहीं है। वे महातपस्वी हैं। दत्तात्रेय के अनुग्रह से वे हजार हाथ पाए। वे इतने बलवान हैं कि तीनों लोकों को दुःख देनेवाले रावण जैसे राक्षस को ही इन्होंने जिस प्रकार कुत्ते को जंजीरों से बांधा जाता है उसी तरह अपने ही घर में बाँधकर बंदी बना चुके। इनकी आज्ञा कोई भी टाल नहीं सकते थे। इस प्रकार वे अपना अधिकार चलाते रहे।

सभी थक गए

ऐसा व्यक्ति एक दिन सपरिवार शिकार के लिए गए। साधारण राजा के संग ही कई लोग होते हैं। ये तो महान सम्राट हैं, उनके साथ

शिकार खेलने वाले लोग हजारों में थे। अत्यंत उत्साह के साथ वे शिकार खेलते रहे। कितने ही जानवरों को मार डाले। यह नहीं कहा जा सकता है कि मरे हुए जानवर सभी क्रूर ही हैं। उनमें हिरण, खरगोश, भैंसा आदि साधु जानवर भी हो सकते हैं। इस प्रकार के जानवरों को मार कर, शस्त्रों के प्रयोग में अपनी निपुणता को बढ़ाने के लिए ही शिकार खेला जाता है। यह जबरदस्त शिकार का खेल तीन दिनों तक चलता रहा। इस कारण सभी लोग थक गये थे। अब शिकार समाप्त कर वापस लौट जाने के लिए तैयार हुए उसी समय खूब तेज वर्षा होने लगी। इस कारण वे वापस नहीं जा सके। उन्हें उसी जंगल में रुक जाना पडा। इससे उन्हें और थकान महसूस हुई।

हमारे आतिथ्य को स्वीकार कीजिए

थके हुए साम्राट सपरिवार जिस रास्ते पर अपने राज्य को लौट रहे थे रास्ते में महर्षि जमदग्नि का आश्रम भी था। महर्षि के आश्रम को देखते ही सम्राट ने सोचा कि वहाँ पर आराम किया जाय। सभी लोगों को आराम करने के लिए कहकर कार्तवीर्यार्जुन अपने साथ कुछ लोगों को लेकर महर्षि के दर्शन के लिए गए। देश के पालक सम्राट पधार रहे हैं, यह देखकर महर्षि ने उन्हें अत्यंत आदर के साथ स्वागत किया। अर्घ्य-पाद्य आदि सादर सत्कारों को निभाकर महर्षि ने कहा ''आप सब लोगों को आतिथ्य देने की हमें चाह हो रही है। हमारे आतिथ्य को स्वीकार कीजिए।'' तब सम्राट ने कहा 'हे महर्षि! आपका आदर सत्कार हमें अच्छा लगा। लेकिन मेरे साथ यही लोग ही नहीं बल्कि कई हजार लोग हैं। वे सब जंगल में विश्राम ले रहे हैं। आपको हमारे कारण कोई कष्ट नहीं होना चाहिए, हमें जाने की अनुमति दीजिए।''

''चाहे कितने लोग ही क्यों न हो सबको आतिथ्य देंगे। हमारे आश्रम में आप जैसे सम्राट आए हैं, आपके अनुकूल हमें आपको आतिथ्य देना चाहिए। ये हमारा धर्म है। हमारी बात को न टालकर हमारा आतिथ्य स्वीकार करिए'' कहा।

सम्राट संकट में पड गये। सोचने लगे कि हमारे साथ हजारों लोग हैं, सब के लिए ये गरीब ब्राह्मण क्या दे पायेंगे? ये तो आतिथ्य का रट लगा रहे हैं, लेकिन क्या ये साग-सब्जी भी बनाकर खिला पाएँगे? उस साग सब्जी को खिलाने के लिए ही आश्रम के सारे पेड़ नष्ट हो जाएंगे। कहीं यह आतिथ्य हंसी-मजाक तो नहीं बन जाएगा। नकारकर जाने से महर्षि को गुस्सा आ सकता है। हो सकता है वे अपने तपोबल के कारण अच्छा आतिथ्य दे सकते हैं। इस प्रकार सोचते हुए अंत में सम्राट ने उस दिन उनका आतिथ्य स्वीकार करने के लिए अपनी सम्मती दी।

हे माँ! आप ही कुछ कीजिए

महर्षि जमदग्नि के आनंद की सीमा नहीं रही। उन्होंने अपने होम धेनु का स्मरण किया। उसके आते ही उन्होंने कहा ''माँ! हमारे आश्रम में एक सम्माननीय अतिथि का आगमन हुआ है। उनके संग असंख्य लोग भी हैं। मैंने सब को आतिथ्य देने का वादा किया। यह आतिथ्य उनके स्तर जैसा और हमारी तपस्या के अनुकूल होना चाहिए। अब तुम कैसे निभाओगी, यह तुम्हारी मरजी है।''

अलौकिक प्रीति भोज

अब 'सुरभी' को जितना करना था वे कर चुकी। देखते ही देखते आश्रम के चारों ओर कई दिव्य भवन आ गए। कई अप्सरसाएँ आसमान से उतर कर आईं। सम्राट को और उनके परिवार को धूम-धाम

से आह्वानित कर उचित भवनों में ठहराया गया। क्षणों में सभी पकवानों के साथ स्वादिष्ट भोजन तैयार हो गये। अन्न के, दालों के, सभी सब्जियों के ढेर, कई प्रकार के खीर, दही, घी के कुंड आदि तैयार हो गये। सोने की थालियों में चांदी की कटौरियों में सभी खाद्य पदार्थ परोसकर, रत्न खचित सिंहासन डालकर, सभी लोगों को कतार में बिठाया गया। सुन्दर आभूषणों से सुसज्जित अत्यंत सुन्दर अप्सरसाएँ परोस्ती गईं। इस प्रकार का प्रीतिभोज उनके जीवन में एक अलौकिक अनुभूति की छाप छोड डाली। सभी लोग महर्षि के तपोबल को देखकर आश्चर्यचकित हुए। सबने इस प्रीतिभोज का भरपूर आनंद उठाया। सम्राट के परिवार के साथ आए हुए सभी जानवरों को जैसे हाथी-घोडे और शिकार के लिए शिक्षा पाने वाले सारे जानवरों को भी उनके अनुकूल खाना देकर उन्हें भी महर्षि ने तृप्त किया।

जब विवेक का नाश हो जाता है...

जो काम हम नहीं कर पाते हैं अगर उसे कोई और करके हमें सम्मान देकर हमें आनंदित करते हैं तो उस समय अगर हम संस्कारवान हो तो जिन लोगों ने हमें इतना आनंदित किया उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करेंगे। हृदयपूर्वक उनकी महानता की प्रशंसा करते हुए वहाँ से लौट जाना चाहिए। हमारे अंदर अगर सौजन्यता हो तो ही ऐसे कर सकते हैं। लेकिन दुष्ट लोगों के मन में ऐसे समय में ईर्ष्या की भावना जागृत होती है। सामने वाले व्यक्ति की महानता को ऐसे लोग सहन नहीं कर पाते हैं। उनकी महानता को नाश करने के लिए संकल्प भी कर लेते हैं। सामने वाला व्यक्ति तपः संपन्न व्यक्ति है, और हमें शाप दे सकता है, इस प्रकार की बातें उनके मन में उठती नहीं हैं। चाहे कुछ भी हो जाय उन्हें दबाकर अपने आपको महान साबित करने की इच्छा बढती जाती

है। जब विवेक नष्ट हो जाता है तब हम किस हद तक गिर सकते हैं यह कौन बता सकते हैं। हम अगर पर्वत शिखर पर खडे हों फिर अचानक पैर फिसल जाए तो हम बहुत नीचे तक गिर सकते हैं। यहाँ भी यही हुआ है। कार्तवीर्यार्जुन के जीवन में भी यही हुआ है।

आप की गाय हमें दीजिए

महर्षि द्वारा दिए गए आतिथ्य से राजा के मन में कृतज्ञता नहीं जगी, बल्कि ईर्ष्या हुई। मालूम हो गया कि इतना बड़ा आतिथ्य कामधेनु के कारण ही महर्षि दे पाए हैं। लेकिन यह समझ नहीं पाए कि महर्षि को वह सामर्थ्य उनके तपोबल के कारण मिला है। फिर वे सोचने लगे कि अगर उस गाय को अपने वश में कर सकें तो महर्षि साधारण मुनि हो जाएंगे। राजा के धुले हुए हाथ सूखे भी नहीं, खाना अभी हजम भी नहीं हुआ, उससे पहले ही कार्तवीर्यार्जुन, जमदग्नि महर्षि के पास जाकर, मन में ईर्ष्या होने पर भी और उनसे द्वेष करते रहने पर भी बाहर से कपटपूर्ण गौरव के साथ नमस्कार कर कहने लगे ''हे महात्मा! आप हमारे लिए एक सहायता कीजिए।'' ऋषि ने कहा 'क्या' आप अपने गाय को हमें दे दीजिए'' सम्राट ने कहा।

नहीं दे सकता

महर्षि जमदग्नि को बात समझ में आ गयी। उन्होंने जान लिया कि राजा अपने अंतः शत्रु के वशीभूत हो गये। अब उनमें सोचने की शक्ति नहीं रहेगी। इसी कारण इस प्रकार का साहस कर पूछ रहे हैं। वे जान गये कि वे चाहे उन्हें कितना भी समझाएँ लेकिन उनमें परिवर्तन नहीं होगा। फिर भी उन्हें कहना तो पडेगा। बहुत ही सौम्य ढंग से ऋषि ने राजा से कहा कि यह कामधेनु उन्हें प्राणों से भी प्यारी है। उसके बिना वे अपना जीवन बिता नहीं पाएँगे। फिर विस्तार से ऋषि ने समझाया कि

वह गाय क्या-क्या काम करती है। उसके बाद उन्होंने मिन्नतें की कि उस गाय को वे अपने से अलग करने का मतलब यही होगा कि वे खुद अपने आपको मिटा देना। इस कारण वे उस गाय को खो नहीं सकते।

आखिर ये ब्राह्मण क्या कर सकता है?

लोभ के वशीभूत सम्राट को ये बातें अच्छी नहीं लगी। सम्राट ने सोचा प्रतिफल की अपेक्षा से शायद ऋषि गाय को छोड सकते हैं। इस आशा के साथ सम्राट ने महर्षि को कई प्रलोभ दिखाए। लेकिन महर्षि किसी भी बात पर माने नहीं। अत्यंत दयावान होते हुए भी महर्षि इस प्रकार जिद कर रहे हैं तो किसी भी अकलमंद व्यक्ति को यह आसानी से समझ लेना चाहिए कि वे गाय को छोडने में असमर्थ हैं। लेकिन सम्राट में तो वह अकल मिट चुकी है। इस कारण उनका क्रोध और भी बढ गया है। उन्होंने सोचा कि हम तो राजा हैं और हमारे साथ शस्त्र और सेना है। अगर इस गाय को हम लेकर चले जायें तो आखिर यह कमजोर ब्राह्मण कर भी क्या सकता है। इस प्रकार सोचते ही उन्होंने अपनी आज्ञा जारी कर दी।

गाय दूसरों की हो गयी

सेना ने जाकर जब उस गाय के गले में रस्सी बांधी तो वह गाय महर्षि की ओर दीनता से देखने लगी। ये भी उस गाय की ओर दीनता से देखते हुए कहने लगे ''माँ! मैं क्या करूँ? आखिर देश के पालक ही इस प्रकार का बरताव कर रहे हैं। मैं प्रतिशोध नहीं कर सकता। मैं दीक्षा में हूँ।'' महर्षि के मन को गाय जान गई। समझ में आ गया कि उसे भी प्रतिशोध नहीं करना चाहिए। राजा से अपने आप को छुडवाने की शक्ति उसमें है, फिर भी उसने अपनी शक्ति का प्रदर्शन नहीं किया। उसने

सोचा अभी उनके साथ चले जाना चाहिए। बदला लेने जो भी हैं, वे बाद में आएंगे।

रेणुका देवी इस घटना को देखकर भौंचक्का रह गयी। उसके राम इस समय आश्रम में नहीं थे। इस कारण उनका दिल बहुत विचलित हो गया। गाय अन्यायपूर्वक दूसरों के वश में हो गयी। इसके लिए उनके मन में जो वेदना जगी, उस वेदना की सीमा नहीं रही। शारीरिक बल के कारण कार्तवीर्यार्जुन बिना किसी रोक-टोक के उस गाय को अपने साथ ले गये।

रेणुका देवी और जमदग्नि दोनों अचंभे होकर देखते रह गए।

कर्म फल को भुगतना ही पडता है!

बुरे काम करते समय लोग बहुत ही उल्लास के साथ करते हैं। ये कभी नहीं सोचते हैं कि वे कोई गलत काम कर रहे हैं। मैं ही राजा हूँ। मैं जो भी करूँगा, वह सही ही होगा, यह सोचना ठीक है, फिर भी सोचकर मालिक की इच्छा के बिना कोई चीज ले जाना तो चोरी ही कहलाती है। मालिक की जानकारी के बिना कोई चीज चोरी किया जाय तो वह साधारण चोरी हो जाती है। अगर मालिक के देखते ही कोई चीज ले जाय तो उसे डकैती कहते हैं। इस प्रकार के काम करते समय गर्व के साथ यह सोचना कि - ''मैं ही ऐसा काम कर सकता हूँ'', लेकिन जब फल को भुगतने की बात आती है तो चाहे कितने महान व्यक्ति ही क्यों न हो, उन्हें रोते हुए उस फल को भुगतना ही पडता है। गलती चाहे सम्राट ही करे लेकिन उन्हें सजा तो पाना ही पडेगा। चोरी हाथों से ही करते हैं, इस कारण इसकी सजा उन हाथों को काटने से ही होता है।

उस समय भी अगर वे अपनी गलती को नहीं मानते तब उनके लिए मौत के अलावा कोई और चारा नहीं है।

प्रकृति थर-थर काँपी

राजा के चले जाने के बाद थोडी देर में राम आश्रम में आए। निश्चल होकर बुत रूप खड़े हुए अपने माता-पिता को देखकर सोचने लगे कि इसके पीछे का क्या कारण है? उनकी माँ ने सारी घटना ऐसी सुनायीं जैसे एक सुक्षत्रिय स्त्री बताती हैं। राम के शरीर में खून खौलने लगा। झट अटारी चढ़कर परशु बाण और तीरों को नीचे उतारे। आज तक इनका कोई काम नहीं था। इस कारण अटारी पर पडे रहें, अब इनकी जरूरत है। उन पर लगी फफूँदी हटाकर पथरी पर सान कर उन्हें चमकाए। तरकश पीठ पर बाँध कर धनुष को कंधों पर डालकर हाथ में पैनी परशु को लेकर, माता-पिता को प्रणाम कर परशुराम राजधानी की ओर चल पड़े।

इस वेश में आश्रम से जब वे चल पडे तब प्रकृति थर-थर काँप उठी थी। पृथ्वी कंपित हुई, तूफान के संकेत से पेड हिलने लगे।

जो करना है कर लो

राज मार्ग में राम को देखकर सारे लोग ऐसे भयभीत हो गये जैसे वे साक्षात रुद्र को ही देख रहे हैं। सीधे वे राजमहल पहुँचे। दासी से राजा को खबर भिजवाये कि ''जमदग्नि का पुत्र परशुराम आया है। सम्मान पूर्वक हमारी गाय छोड दी जाए।'' क्या कोई सेवक इस प्रकार की बातें राजा से कह सकता है? इसके विपरीत परशुराम के कहने पर बिना हिले क्या वह रह पाएगा? इस कारण डरते हुए जाकर राजा से कांपते हुए कहने लगा 'हे प्रभु परशुराम सशस्त्र आए हैं। वे अपनी गाय को छोडने के लिए कह रहे हैं।'

कार्तवीर्यार्जुन को गुस्सा आ गया। सेवक की बातों में उनके प्रति भय से ज्यादा परशुराम के प्रति ही भय अधिक दिखाई दे रहा था। आखिर इस ब्राह्मण की महानता क्या है?

बाहर आकर राम को देखते हुए उपेक्षा के साथ कहने लगे कि ''तूणीर, परशु हाथ में लिए आते ही, गाय को छोडने के लिए कहोगे तो क्या मैं छोड दूँगा। जाओ जाओ। जो करना है कर लो'' कहते हुए पीछे मुडे।

''तुम रहोगे या मैं रहूँगा'' फैसला आज ही हो जाना चाहिए

''तो फिर युद्ध के लिए तैयार हो जाओ। आज जब तक फैसला ना हो जाय कि तुम रहोगे या मैं? तब तक मैं यहाँ से हटूँगा नहीं।'' कहते हुए परशुराम ने युद्ध प्रकट किया। कार्तवीर्यार्जुन की सहायता के लिए सेना तैयार हो गयी। रथ पर चढ़कर राजा युद्ध भूमि में खड़े हो गये। वे रथी हैं, और सशस्त्र भी हैं। सेना सहित हैं। परशुराम अकेले हैं। भूमि पर खडे हुए हैं। केवल तूणीर और परशु ही उनके शस्त्र हैं। स्पष्ट ही यह एक विषम युद्ध है। कोई भी सच्चा क्षत्रिय इस प्रकार के युद्ध को स्वीकार नहीं करते। दुष्ट कार्तवीर्यार्जुन ने इस पर ध्यान नहीं दिया। यह जानते हुए भी तैयार होने वाले परशुराम ने इस विषय पर गौर ही नहीं किया। दोनों के बीच महा युद्ध हुआ। परशुराम के हाथों सम्राट की पूरी सेना मर चुकी। साल के पेडों की तरह आसमान को छूने वाले कार्तवीर्यार्जुन के हजारों हाथ राम के परशु से ऐसे गिरे जैसे पेड से डालियाँ गिरती हैं। स्तंभ जैसा खडा हुआ राजा के धड से सिर अलग हो गया। जीतकर परशुराम अपनी गाय को लेकर आश्रम चले गए। सारी घटनाओं को उन्होंने अपने पिताजी से कह दिया। महर्षि उस गाय को पाकर आनंदित तो हुए लेकिन राजवध को महापाप सोचकर चिंतित हुए।

कहानी यही समाप्त हो जाती तो परशुराम को यह नौबत नहीं आती कि सभी क्षत्रियों का संहार करे। वे इसलिए अवतरित हुए हैं कि भूमि का भार कम करें। दुष्ट क्षत्रियों का संहार नहीं होगा तब तक ये भूभार घटेगा नहीं। इस कारण यह कहानी यहीं खत्म नहीं हुई।

बदला लेना ही होगा

कार्तवीर्यार्जुन के दस हजार पुत्र हैं। इन सब को परशुराम पर क्रोध था। उन्हें गुस्सा इसलिए था कि अन्यायपूर्वक अपने पिता से युद्ध कर परशुराम ने उन्हें मार दिया। उनके पिता तो भगवान दत्तात्रेय के कृपा पात्र हैं, वे सहस्त्र भुजाओं वाले हैं और फिर इतनी बडी सेना होते हुए भी वे अकेले परशुराम के हाथों मारे गए। वे सोचने लगे कि हम दस हजार होकर भी उन्हें क्या कर सकते हैं?

कुछ न करके भी कैसे चुप हो सकते हैं? कुछ न कुछ तो करना ही है। इसके लिए जब परशुराम आश्रम में नहीं थे उस समय जानकर वे दस हजार पुत्र जमदग्नि के आश्रम पर आक्रमण करने गए। वहां क्या था? पूरा आश्रम पेड़-पौधों से भरा था। साधु जंतु, गाय और हिरण थे, रेणुका देवी, महर्षि जमदग्नि और अन्य आश्रम वासी जो भी थे वे भी इसी तरह सहृदयी थे। महावीर अर्जुन के पुत्रों ने उन पेड़-पौधों को तहस-नहस कर दिया। कमजोर मृगों को भी चोट पहुँचाने लगे। आश्रम वासियों को पेडों से बांधकर सताने लगे। जब रेणुका देवी जोर से चीखने लगीं तब उन्हें निस्सहाय छोडकर, वीर कार्तवीर्यार्जुन के पुत्र आँखे बंधकर तपस्या करने वाले महर्षि जमदग्नि के पास जाकर अपने पराक्रम का प्रदर्शन करते हुए उनके सिर को काट डाले। फिर वहाँ एक क्षण भी न रुक कर ऐसे भागे जैसे उनके द्वारा किया हुआ अन्याय ही जैसे उनका पीछा कर रहा है। उनके साथ ही सभी लोग चले गए।

जब यह दारुण घटना घटी थी उस समय रेणुका देवी, परशुराम का स्मरण करती हुई दुःखित हुई। राम-राम पुकारती हुई आक्रोश करने लगीं। इस प्रकार चीख-चीखकर कमजोर होकर अपनी आँखों के सामने होने वाली इस दारुण दृश्य को देख न सकने के कारण बेहोश हो गयीं।

इक्कीस बार हमला

जंगल में परशुराम को माँ की आवाज सुनाई दी। आवाज सुनते ही वे आश्रम की ओर चल पड़े। आते वक्त वे गिनने लगे कि माँ ने उन्हें कितनी बार बुलाया है। वे गिनने लगे। वे उसूल के इतने पक्के थे। माँ की आवाज उन्हें ठीक २१ बार सुनाई दी। उसके बाद वह आवाज थम गयी। क्या हुआ होगा आश्रम में? माँ के आक्रोश का कारण क्या हो सकता है? कुछ दुर्घटना तो घटी ही होगी। इस प्रकार सोचते हुए आश्रम जाकर परशुराम ने वहाँ कटे हुए अपने पिता के सिर को और शिवलिंग की तरह पद्मासन स्थित उनके धड को देखा। प्राण न होने पर भी तपः प्रभाव के कारण पिता के प्रकाशित शरीर को देखते रह गये। एक ओर पिता की मृत्यु के दुःख को अनुभव करते हुए दूसरी ओर पिता की महानता पर अचरज होते हुए उन्हें मन ही मन उन्होंने प्रणाम किया। बगल में ही निर्जीव पडी हुई अपनी माँ को देखकर घबरा गये। उनकी सेवा कर उन्हें होश दिला पाये। तब तक बंध मुक्त आश्रम वासियों के द्वारा सारी विषयों की जानकारी पा ली। ठीक उसी समय वहाँ पर भृगु महर्षि आए। आते ही वहाँ घटी दुर्घटना को जानकर अपने तपोबल से सिर और शरीर को जोडकर, महर्षि जमदग्नि को उन्होंने जीवित किया। होश आने पर भी रेणुका देवी अत्यंत दुःखी थी। लेकिन पति को जीवित देखकर उनके चेहरे पर थोडी से चेतनता जगी। इस प्रकार माता-पिता,

वंश के मूल पुरुष भृगु महर्षि तथा आश्रम वासियों के सामने परशुराम ने शपथ ली कि ''उनकी माँ उन्हें इक्कीस बार बुला चुकी हैं इस कारण इक्कीस बार वे भी भूप्रदक्षिणा कर, उसके बाद दुष्ट क्षत्रिय वंशों का संहार कर भू भार का निर्मूलन करेंगे। यह प्रतिज्ञा कर उसी क्षण वे आश्रम छोडकर चले गए।

खून की नदियाँ बहने लगी

सर्वप्रथम हैहाय वंश नाश हो गया। अर्जुन के दस हजार पुत्र मृत्यु के शिकार हो गये। उस वीर राजा का सारा परिवार खत्म हो गया। संपूर्ण महिष्मती नगर जलकर राख हो गया। इस प्रकार प्रथम भूप्रदक्षिणा में ही कई हजार राजा मारे गये। दूसरी बार से ही राजा लोगों को ढूँढने की नौबत आई। तीसरी और चौथी बार क्षत्रियों को ढूँढने में ही काफी कष्ट होने लगा। परशुराम के सामने न आने के लिए कई उपाय करके छुपने पर भी उन सब लोगों को ढूँढ-ढूँढकर बाहर निकाल कर परशुराम ने उनका वध किया। इक्कीस बार भूप्रदक्षिणा समाप्त होते ही राजाओं के रक्त की नदियाँ प्रवहित होने लगी। संपूर्ण आर्यावर्त में केवल कुरुक्षेत्र प्रदेश ही ढलान में होने के कारण वहाँ पर रक्त से भरे पाँच बडे-बडे कुंड हो गए। पिता की मृत्यु के उपरांत उन कुंडों के रक्त से ही परशुराम ने पितृ देवताओं को तर्पण देकर उन्हें शांति पहुँचाई। इसी कारण इन कुंडों का नाम 'श्यमंत पंचक' पडा।

परशुराम के लिए प्रीति पात्र हो गया

तेलुगु में 'परशुराम प्रीति' एक कहावत के रूप में लिया जाता है। इसका मतलब सब कुछ सर्वनाश हो जाना, जैसे कहीं भी कोई भी शहर आग की दुर्घटना से जल जाए तो इस कहावत का प्रयोग किया जाता है। अग्नि देवता जब कुछ जलाने लगते है तो वे यह नहीं देखते कि यह पूजा गृह है, या यह सोने का कमरा है, या यह बालक है, या कोई बुजुर्ग है। इसी प्रकार परशुराम के क्रोध में भी चीजों को देखा नहीं जाता। यही ही नहीं अग्नि की ज्वालाएँ भी अनायास ही नहीं फैलती।

चत्वारों धनदायादा :
धर्माग्निनृपतस्करा : ।

तेषां ज्येष्टावमानेन
त्रयः कुप्यन्ति सोदरा : ।।

मानव द्वारा अर्जित धन के हकदार चार लोग होते हैं वे हैं, धर्म, अग्नि, राजा और चोर इन चारों में धर्म बड़ा होने के कारण अगर कभी उन्हें अपमान होना पड़ा तो बाकी तीन भाई गुस्से से बरस पडते हैं। अर्थात अधर्म से अर्जित किया गया धन हमें प्राप्त नहीं होता। वह धन आग की दुर्घटना में जल जाता है। या फिर दुष्ट राजा लोगों के वश हो जाता है। या फिर चोर लूट कर जाते हैं। हम देखते रहते हैं कि दस घरों के बीच एक घर बिना किसी के प्रयास के ही सुरक्षित रह जाता है। तब हम सोचते हैं कि इस प्रकार वह घर के सुरक्षित होने के पीछे इस घर के न्यायपूर्वक अर्जित किया गया होगा। इसी प्रकार परशुराम ने भी दुष्ट क्षत्रिय वंशों का निर्मूलन विवेक रहित कर दिया है। अधर्म का पूरा नाश होने पर ही वे सब परशुराम के प्रीति पात्र बन सके। इसी कारण यह कहावत लोगों में व्याप्त हो गया है।

परशुराम क्षेत्र

इस प्रकार पितृ द्रोह का प्रतिकार लेने के बाद, संपूर्ण भूमंडल परशुराम के अधीनस्थ हो गया उस सारे भूभाग को इन्होंने कश्यप नामक ब्राह्मण को दान में दे दिया। तभी से इस पृथ्वी का नाम 'काश्यपि' पड़ा है। देखिए परशुराम कितने निःस्वार्थी हैं। दान रूप में दिए गए पृथ्वी पर खुद का रहना धर्म विरुद्ध मानकर समुद्र को शासित करते हुए, नए पृथ्वी का आविष्कार किया। इस प्रकार उस पृथ्वी का नाम 'परशुराम क्षेत्र' नाम से जाना गया। विद्वानों का कहना है कि अभी हमारे दक्षिण प्रान्त में स्थित संपूर्ण केरल प्रान्त परशुराम क्षेत्र से ही संबंधित है। महेन्द्र पर्वत भी उसी भूभाग का हिस्सा है। इस प्रकार भूदान करने के बाद परशुराम सभी देवताओं के सामने शस्त्रों को त्याग कर शान्त होकर महेन्द्र पर्वत पर जाकर वहाँ तपस्या करने लगे। वे चिरायु हैं। कहा जाता है कि अभी भी उस पर्वत पर वे विराजमान हैं।

अभी वैवश्वतमन्वंतर चल रहा है। यह इस श्वेतवराह कल्प में सातवा हैं। कहा जाता है कि आने वाले मन्वंतर में सप्तऋ षियों में परशुराम भी एक होंगे।

कोमल हृदयी हैं!

महाकवि भवभूति का कहना है कि महान लोगों के हृदय कोमल फूलों से भी नरम होते हैं और वज्रों से भी कठोर होते हैं। उनकी बातों में सत्य हैं। इस प्रकार के कई सत्यों का उन्होंने आविष्कार किया है, इस कारण वे महाकवि सत्य द्रष्टा बन गये। सभी ऋषि सत्य द्रष्टा ही होते हैं। जो ऋषि नहीं होते वे कवि नहीं बन सकते हैं। परशुराम जैसे महान लोगों को देखकर ही उन्होंने इस सत्य का उद्घाटन किया है। इतने कठोर नियमों के साथ दया रहित होकर प्रतिकार लेते समय भी उन्होंने जिन नियमों का पालन किया उन्हें जानने पर यह अवगत हो जाता है कि उनका हृदय कितना कोमल है। परशुराम कभी भी स्त्रियों के शरण में नहीं गए। कहीं शादी भी होती तो वे उसके आस-पास भी जाते नहीं थे। वे इस प्रकार के नियमों का पालन करने वाले जानकर कई राजा लोग चूडियाँ पहन कर स्त्रियों के संग मिलकर अपने प्राणों की रक्षा करते थे। जब भी परशुराम के आने की खबर मिलती तो राजा दशरथ हर बार किसी क्षत्रिय कन्या को बुलाकर विवाह के मंडप में बिठाते थे। इस प्रकार उन्होंने तीन सौ साठ लोगों को आश्रय देकर कई राजा परिवारों की रक्षा की। परशुराम द्वारा इस प्रकार कुछ लोगों के बचने के कारण ही परशुराम के बाद भी क्षत्रिय जाति टिक पाई।

क्या परशुराम अवतार है?

कहा जाता है कि क्रोध बुरी चीज है। इसमें कोई संदेह नहीं कि यह अग्नि की ज्वाला समान होती है। जो आश्रय दे अग्नि उसी को जला देती है। दिया सलाई की टीली की नोक में आग होता है। जब तक उसे जलाते नहीं है तब तक वह टीली साधारण टीली की तरह ही होती है। एक बार आग बाहर आ जाती है तो पहले वह टीली जल जाता है उसके पश्चात ही किसी पर आग लग सकती है। क्रोध भी उसी प्रकार होता है। उसे रहने के लिए हम अगर जगह दें तो वह हमें ही नाश कर देता है। इस कारण किसी भी परिस्थिति में क्रोध को पास नहीं आने देना चाहिए। सुमती शतक के कर्ता ने क्या यूँ ही बताया कि ''अपना क्रोध ही अपना शत्रु है?'' भगवद्गीता में भी हमें चेतावनी दी गयी कि काम, क्रोध, रजोगुण से ही उत्पन्न होते हैं। उनसे बढकर कोई शत्रु नहीं होते। जब तक उन पर विजय न पाया जाय तब तक मानव की प्रगति नहीं हो सकती। विद्वतजन और सभी शास्त्र इस प्रकार क्रोध की निंदा करते हैं तो इस प्रकार के तीव्र क्रोध को प्रदर्शित करने वाले परशुराम को भगवान का अवतार स्वरूप मानने में क्या कोई औचित्य है?

क्रोध सब के लिए बुरा नहीं होता

यह सच है कि क्रोध अच्छा नहीं है लेकिन साधारण लोगों के विषय में यह बुरी चीज है। महान लोगों के अनुसार यही नहीं, सृष्टि में कोई भी चीज उनके लिए बुरी नहीं होती है। हम जिसे बुरा कहते हैं ये सभी बुरे इसलिए होते हैं क्योंकि उसके उपयोग करने की पद्धति ही गलत होती है। ये तभी बुरे होते हैं। जिसे हम अच्छा समझते हैं उन्हें भी अगर हम अज्ञानवश उनका उपयोग बुरे ढंग से करें तो वे भी बुरे हो जाते हैं।

दया गुण अच्छा ही है लेकिन कुछ जगह उसका उपयोग करें तो वह गुण भी हमें हानि पहुँचा सकता है। अगर राजा लोग दया को अपनाने लगें तो वे अपने नियमों को अमल नहीं कर पाएंगे। उसी कारण कवि वाल्मीकी और भवभूति ने अपने काव्यों में कहा है कि श्रीराम ने दया, सुख और स्नेह की परवाह नहीं की। इस कारण अच्छा और बुरा वस्तुओं के आधार पर नहीं होता है। उन्हें उपयोग में लाने की पद्धति के अनुसार ही वे अच्छे या बुरे लगते हैं।

क्रोध क्यों बुरा होता है, क्योंकि वह हमारे मन की शांति के लिए अवरोधक है। मन की शांति को खोए बिना जहाँ आवश्यक है अगर क्रोध का प्रदर्शन कर सकें तो उसमें बुराई नहीं है। महा कवि श्रीनाथ ने अपने 'हरविलास' काव्य में मुनि दुर्वास के साथ इस प्रकार कहलवाया

क्रोधं बितरुलकुन् दपो
बाधकमगुगानि ना तपम्बुनकदियु
द्रोधकम सलिल मग्निकि
बाधकमै वैद्युताग्नि प्रभविंचु गतिन् ।।

अगर तपस्या अग्नि समान है तो क्रोध पानी समान। क्रोध को आश्रय देने वालों को अगर दूसरे तपस्वी का पानी भी छू जाय तो आग के बुझने की तरह नष्ट हो जाता है। मेरी तपस्या वैद्युताग्नि के समान है। जल तो वैद्युताग्नि को उत्पन्न करते हैं। पानी अग्नि को बुझाती नहीं। इस कारण पानी के अधिक होने पर वैद्युताग्नि जिस प्रकार प्रज्वलित होती है उसी प्रकार मेरी तपस्या के कारण मेरा क्रोध बढ़ता ही जाएगा। कभी घटेगा नहीं। मुनि दुर्वास द्वारा कहे गए शब्द सच ही हैं। उनका सारा क्रोध धर्म द्रोह के विरोधी था। अपनी इच्छा पूर्ति ना होने के कारण नहीं हुआ।

इस प्रकार क्रोध धार्मिक क्रोध होने के कारण ही इनकी तपस्या भंग नहीं हो पायी। परशुराम का क्रोध भी ठीक इसी प्रकार का है।

नेवले की तरह बैठे हो, नेवला का जन्म लो

अगर धार्मिक क्रोध न होता तो धर्मानुष्ठान ही नहीं होते। उस समय हम अपने आपको शांतिदूत मानते हुए भी परोक्ष रूप से अधर्म को प्रोत्साहित करने वाले ही होंगे। धार्मिक क्रोध को सहन न करने के कारण हम भी अधर्म के रास्ते पर चलने वाले हो सकते हैं। महर्षि जमदग्नि के जीवन में इसी प्रकार की एक घटना हुई है। एक बार पितृ - यज्ञ के लिए दूध के बर्तन को उन्होंने एक स्थान पर बहुत ही हिफाजत से रखा। वैसे तो महर्षि जमदग्नि अत्यंत शांत स्वभाव के है फिर भी उन्हें अत्यंत क्रोधी भी कहा जाता है। एक बार क्रोध देवता को भी उनके क्रोध को परखने की इच्छा हुई। उस देवता ने सारे दूध को उद्देश्यपूर्वक ही उंडेल दिया। लेकिन ऐसा व्यवहार किया कि वह गलती से वह बर्तन उनके हाथ से गिर गया है। महर्षि ने इसे देखकर भी अनदेखी कर दी। तब क्रोध देवता ने कहा ''आपको सभी लोग अत्यंत क्रोधी कहते हैं, मैंने दूध गिरा दिया फिर भी आपने मुझे कुछ नहीं कहा। अभी मुझे मालूम हुआ कि आप कितने शांत स्वभाव वाले हैं। मुझे माफ कर दीजिए।'' ये कहते हुए उन्होंने उनसे माफी मांगी। तब जमदग्नि ने क्रोध देवता से कहा कि ''जब तुमने कोई गलती नहीं की है तो इस प्रकार की माफी क्यों माँग रहे हो।'' इस पर पितृ देवताओं को क्रोध आया। उन्होंने यह कहते हुए शाप दिया कि ''यज्ञ भंग के लिए तुम तैयार हो गए हो लेकिन जिस व्यक्ति ने गलती की है उसे तुम डांट नहीं पाये। नेवले के जैसे बैठे हो, नेवले का जन्म लो।'' तब महर्षि जमदग्नि ने विनती की ''मुझे मेरी गलती का एहसास हो गया है, मुझे क्षमा कीजिए।'' तब पितृ देवताओं ने उन पर

अनुग्रह करते हुए कहा कि ''जब तुम नेवले का जन्म लेकर धर्मराज के यज्ञ की अवहेलना करोगे, तब तुम शाप से मुक्ति पाओगे। सक्तुप्रस्थ ने जिस जगह महान दान दिया, उन जगहों पर चलने के कारण ही नेवले के शरीर का कुछ भाग सुनहले रंग का हो गया था। तब नेवले अपने पूरे शरीर को सुनहला बनाने की इच्छा के कारण कई जगह घूमा। अंत में धर्मराज के यज्ञ स्थान पर पहुँचा। वहाँ भी अपनी इच्छा पूरी न होने के कारण धर्मराज के यज्ञ की अवहेलना कर शाप विमुक्त हो गया। ये कहानी तो जगत प्रसिद्ध है। इसलिए क्रोध सहज रूप से बुरा नहीं है। सब लोगों के जीवन में कुछ अंश तक क्रोध भी आवश्यक है। उसके उपयोग करने के आधार पर ही वह अच्छा या बुरा बन जाता है। मुनि दुर्वास और परशुराम के लिए क्रोध बुरा साबित नहीं हुआ है। उन लोगों ने उसे अच्छाई के लिए ही उपयोग किया है और इसके साथ उन लोगों ने अपनी महानता को भी दूर नहीं किया। यह लोक मंगल ही साबित हुआ है।

तुम्ही हो?

इस प्रकार शांति पाकर परशुराम महेन्द्र पर्वत पर जाकर तपस्या करने लगे। उस समय दशरथ के पुत्र श्रीराम द्वारा शिवधनुर्भंग होने के कारण परशुराम अत्यंत संक्षोभित हुए। उन्होंने सोचा कि शिवद्रोह हुआ है, इस कारण वे क्रोधावेश के साथ विष्णु धनुष को लेकर मिथिला नगर गये। इनके आने तक वहाँ सीता-राम का विवाह हो चुका था। राजा दशरथ तब तक अपने चार बेटों और बहुओं को साथ लेकर अयोध्या जाने के लिए तैयार हो गये। उसी समय परशुराम का आगमन हुआ है। आते ही श्रीराम को देखकर पूछने लगे कि ''क्या तुम ने ही शिव धनुष को तोडा है?''

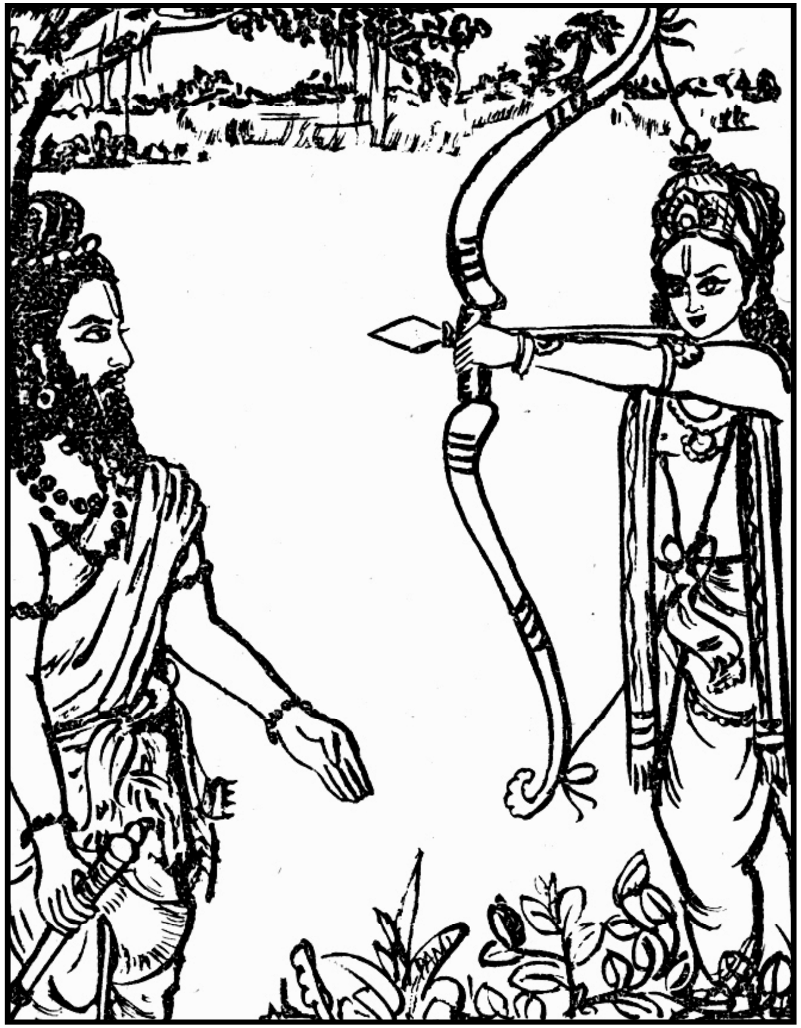

दो राम

परशुराम के आगमन से ही राजा दशरथ घबरा गए और आते ही जब उन्होंने श्रीराम से ऐसा प्रश्न किया तो और भी घबरा गये। उनसे प्राणों की विनती करने लगे। वशिष्ठ आदि मुनि लोगों ने परशुराम से पूछा कि सभी लोगों के सामने जब आपने शस्त्रों को त्याग दिया तो फिर अब क्यों शस्त्र धारण किया है? लक्ष्मण जैसे युवकों ने पूछा कि शिवधनुष को तोडने की शर्त राजा जनक ने रखी है। तो यह बात राजा जनक से पूछना चाहिए तो फिर राम से क्यों पूछ रहे है? इस प्रकार सभी लोगों द्वारा रोकने पर भी परशुराम ने किसी की परवाह नहीं की। सीधे श्रीराम के पास जाकर उन्हें जो कुछ पूछना था पूछ डाले। दशरथ के राम ने विनय पूर्वक स्वीकार किया कि उन्हीं के हाथों धनुष भंग हुआ है। उनकी विनयपूर्वक बातें सुनकर परशुराम और भी क्रोधित हो गये।

इसे निशाना बांध कर तो दिखाओ

''क्या शिवधनुष तुम्हारे हाथों टूट गया है? इन छोटे से हाथों द्वारा? राम! तुम इतने बेपरवाह कैसे हो गए हो? यह ठीक नहीं है। राजा जनक ने इतने सालों तक उसे पेटी में बंद कर रखा है इस कारण वह सड गया होगा। आखिर तुम कर भी क्या सकते हो। पुराना हो गया हो इस कारण उसे उठाते ही टूट गया होगा। जाने दो उसी के साथ का है यह विष्णु धनुष। मैं उसे लाया हूँ। इन दोनों धनुषों को विश्वकर्मा ने एक ही साथ बनाया है। वह धनुष मिथिला राजाओं के पास था और यह भार्गव वंश में है। इसे भी तुम निशाना लगाओ। देखने की इच्छा हो रही है। क्या तुम इसे निशाना लगा सकोगे? परशुराम ने व्यंग्य के साथ कहा। श्रीराम को साधारण मानव समझने वाले अज्ञानियों के भ्रम को भंग

करने के लिए ही परशुराम ने ऐसा व्यंग्य किया है। रघुराम श्री महाविष्णु ही हैं। इस बात को परशुराम तो जानते हैं। श्रीराम को विष्णु धनुष देकर यह याद दिलाने के लिए कि तुम्हीं विष्णु हो इस प्रकार उन्हें परिपूर्णत्व प्रदान करने के लिए ही परशुराम यहाँ पधारे हैं। फिर भी अपने पूर्व आश्रम के अनुसार ही लोगों को समझाने के लिए इस प्रकार का बरताव उन्होंने किया है।

अपना उद्देश्य बताइए

श्रीराम भी कुछ कम हैं क्या? उन्होंने कहा कि ''मैंने प्रतिज्ञा ली कि अगर एक बार मैं निशाना लगाऊँ तो उसे व्यर्थ नहीं जाने दूँगा। इसी कारण मैंने शिवधनुष का भी निशाना नहीं बांधा। पेटी में शिव धनुष था। उस पेटी से जैसे ही मैंने धनुष की डोरी खींची वह झट टूट गया। अब आप मुझे इसे निशाना लगाने के लिए कह रहे हैं। आप ही कहिए मैं निशाना लगा कर किसे मारूँ।''

''तुम निशाना लगा सको तो समझो कि तुम जीत चुके हो। निशाने की बात बाद में सोचेंगे पहले काम शुरू करो।'' परशुराम ने कहा। लक्ष्य की जानकारी के बिना श्रीराम निशाना लगाने के लिए तैयार नहीं हुए। उन्होंने कहा ''आप हमारे गुरू विश्वामित्र के करीब के रिश्तेदार हैं। भार्गव वंश के ब्राह्मणोत्तम हैं। मैं आपके पैरों पर निशाना लगाऊँ या फिर आपके द्वारा अर्जित तपोलोकों को दहन करूं, सोचकर बताइए। निशाना लगाऊंगा।''

दोनो एक हो गए

पहले से ही राम की जानकारी रखने वाले परशुराम को इस कथन से अपने कर्तव्य का बोध हो गया है। श्रीराम को विष्णु धनुष समर्पित करते ही उनका अपना यह आवेश अवतार समाप्त हो जाएगा। उसके

पश्चात उन्हें भार्गव वंश के तपस्वी रूप में ही रहना होगा। सारी जिन्दगी तो आगे ही है तो अब पैरों को खोकर लंगडा बनकर क्यों रहें? अगर तपोलोक दग्ध हो जायें तो फिर से तपस्या करके उन्हें प्राप्त कर सकते हैं। इन्हीं बातों को उन्होंने श्रीराम से कहा। ''हे राम! जगन्मोहन! विश्व को मोहित करने वाले अपने हाथों को इस ओर पसारिए।'' वात्सल्य पूर्वक उनसे विनती की। श्रीराम मुग्ध होकर आनंद के साथ अपने हाथ पसारे। तब परशुराम ने विष्णु धनुष को अत्यंत श्रद्धा के साथ उनके हाथों में रखा। तब तक परशुराम में अंतर्लीन विष्णु तेज भी धनुष के साथ श्रीराम में ऐक्य हो गया। उसी समय से ही श्रीरामचन्द्र पूर्ण रूप से विष्णु अवतारी हुए।

निशाना लगाए गए बाण से श्रीराम ने परशुराम के तपोलोकों को दग्ध कर दिया। यह देखकर परशुराम महेन्द्रगिरि चले गए। तब तक परशुराम का अवतार समाप्त हो गया। लेकिन परशुराम आज भी जीवित हैं। परशुराम के जीवन की विशेषताएँ कई हैं। सभी विशेषताओं को स्मरण करने के लिए यह क्षेत्र काफी नहीं है। फिर भी उनके जीवन की कुछ मुख्य विशेषताओं को याद न करे तो उनके जीवन को स्मरण करने का आनंद ही नहीं मिलेगा। इनमें अत्यंत प्रमुख है, परशुराम द्वारा स्वयं अपनी माता रेणुका देवी का वध करना। यह घटना कब घटी है, इसका अंदाजा तो नहीं है। लेकिन यह कहा जा सकता है कि परशुराम के बाल्य काल में ही यह घटना घटी होगी।

जूते-छाता

महर्षि जमदग्नि अपनी पत्नी रेणुका देवी से बहुत प्यार करते हैं। रेणुका देवी के लिए महर्षि प्रत्यक्ष दैव ही हैं। उनके सफल दांपत्य प्रेम के फलस्वरूप उन्हें पाँच पुत्र हुए। माता के दिल में स्थित पति-प्रेम को,

पुत्रों द्वारा अवहेलित होने के लिए स्वयं जीव जन्म शास्त्र ही सहमत नहीं होता।

पाँच पुत्रों की माँ बनने के बाद भी रेणुका देवी अत्यंत सुन्दर थीं। उनके द्वारा निभाने वाली पति सेवाओं में एक यह है कि जब भी पति धनुष का अभ्यास करते थे तब वे भागती हुई जाकर छोडे हुए बाणों को ले आती थीं। यह काम उन्हें धूप में करना पडता था। इस कारण महर्षि ने अपनी प्रेयसी के लिए जूते लाकर दिये ताकि उनके पैर न जले और छाता लाकर दिया ताकि छोडे हुए धूप ना लगे।

अपनी माँ का वध करो

एक दिन महर्षि जमदग्नि धनुष अभ्यास कर रहे थे। उस समय तीर से निकले एक बाण को लाने में रेणुका देवी ने देरी कर दी। वह बाण एक सरोवर के किनारे जा गिरा। उस सरोवर में उस समय चित्ररथ नामक एक गंधर्व अपनी पत्नियों के संग जल-क्रीड़ा में मग्न थे। स्त्री सहज चपलता के कारण उस दृश्य को देखती हुई रेणुका देवी ने देरी कर दी। उनकी देरी का कारण जानकर महर्षि ने अपने बडे बेटे रुमण्वंत को बुलाकर अपनी माँ के सिर को काटने का आदेश दिया। वे नहीं माने। फिर दूसरे पुत्र सुसेषण, तीसरे पुत्र वसुवू, चौथे पुत्र विश्वा वसुवू, को भी महर्षि जमदग्नि ने यही आदेश दिया उन्होंने भी मना कर दिया। फिर पाँचवे पुत्र राम को बुलाकर मातृ वध करने की आज्ञा दी। अत्यंत विधेयी होकर राम ने अपनी पिता के आदेश का पालन किया। महर्षि जमदग्नि अत्यंत आनंदित हुए और उन्होंने परशुराम से वर मांगने के लिए कहा। माता को जीवन देना ही उनके द्वारा मांगा गया वर था। दुर्बलता वश पिता की आज्ञा का पालन ना कर सकने वाले भाईयों के प्रति भी अनुग्रह जताने के लिए परशुराम ने अपने पिता से प्रार्थना की।

रेणुका जीवित हो गयी

पिता के स्वभाव को जानने का सामर्थ्य रखने वाले होने के कारण ही परशुराम ने बिना हिचकिचाहट के पिता की आज्ञा का पालन कर माता का वध कर पाए। माँ से हुई इतनी छोटी गलती के लिए इतनी कड़ी सजा क्यों? ऊपर से कट्टर दिखने पर भी पत्नी के प्रति प्रेम के कारण ही महर्षि जमदग्नि ने यह आज्ञा दी। रेणुका देवी ने जो गलती की है वह एक प्रकार से मानसिक व्यभिचार ही है। यहाँ अगर उस गलती की उपेक्षा की जाय तो उन्हें नरक की पीड़ा सहनी पड़ती अगर यहीं सजा भुगत ले तो फिर परलोक की पीड़ा नहीं रहेगी। परशुराम के विनय स्वभाव के कारण ही वे पवित्र बनी। पुनः अपनी प्रेयसी को महर्षि ने अपनी तपोशक्ति से पुनर्जीवित भी किया। इसलिए वे इतने आनंदित हुए। परशुराम की इच्छा के अनुसार आज्ञा का उल्लंघन करने वाले पुत्रों को भी वे शाप विमुक्त कर पाए। महर्षियों के हृदय अत्यंत गंभीर होते हैं। उनके द्वारा किये गए कर्मों को जाने बिना उनकी आलोचना करना सही नहीं है।

जरूरत के समय यह काम में नहीं आयेंगे

परशुराम, कर्ण के गुरू बने। जब उन्हें पता चला कि उन्हें कर्ण ने धोखा दिया है तो कर्ण को शाप देने की घटना उनके जीवन की और एक मुख्य विशेषता है। अपने जन्म रहस्य के भेद को जान न सकने के कारण और अपने आप को दासी पुत्र मानने वाले कर्ण ब्रह्मास्त्र का उपदेश पाने निमित्त महेन्द्रगिरि पर रहनेवाले परशुराम के आश्रम गए। वैसे भी झूठ बोलना पड़ रहा है तो अपने आपको निम्नवर्ग का व्यक्ति क्यों बताए, यह सोच कर कर्ण अपने को ब्राह्मण कहकर, परशुराम के शिष्य बने। परशुराम ने उन पर विश्वास कर ब्रह्मास्त्र के साथ सभी

अस्त्रों के उपदेशों से उन्हें अनुग्रहीत किया। एक दिन गुरू, शिष्य की गोद में सर रखकर सो गये। पुत्र के प्रति प्रेम से इन्द्र ने इस मौके का फायदा उठाना चाहा। परशुराम द्वारा अर्जित शस्त्र विद्या को निष्प्रयोजन करने के उद्देश्य से वे कीड़े का रूप धारण कर कर्ण के जांघ को काटने लगे। गुरू की नींद कहीं भंग ना हो जाय इस कारण उस पीड़ा को कर्ण सहते हुए रह गए। खून के बहने से परशुराम की नींद खुल गयी। झट से उठे और खून को देखकर पूछने लगे ''क्या हुआ है?'' विषय की जानकारी पाने के बाद उन्होंने कहा ''ब्राह्मण ऐसा काम नहीं कर सकता, तुम कौन हो सच बताओ? सच की जानकारी कर्ण को भी नहीं है फिर भी उन्होंने कहा कि ''अवश्य मैंने झूठ कहा है। ''इस प्रकार जो बात कर्ण जानते थे उसी को फिर से उन्होंने दुहराया। धोखे से शिक्षा ग्रहण करने के कारण परशुराम ने शाप दिया कि यह विद्या तुम्हारी जरूरत में काम नहीं आएगी।

इस प्रकार गुरू के शाप के कारण सीखी हुई शस्त्र विद्याएँ बेकार होने पर भी इस विषय को बहिर्गत ना कर दुर्योधन आदि से यही कह चुके कि परशुराम के कारण वे संपूर्ण शास्त्रज्ञ हो गए। महाभारत युद्ध में मुख्य स्थान पाने वाले कर्ण के साथ परशुराम के संबंध भी, विष्णु अवतार के प्रयोजन से ही संबंधित हैं। दुर्योधन नहीं जानते थे कि वे शापग्रस्त हैं। उन्होंने सोचा कि कर्ण के जरिए वे अर्जुन को जीत सकते हैं। इसी विश्वास के कारण संधि को स्वीकार ना कर युद्ध के लिए तैयार हो गये। एक प्रकार से यह पृथ्वी के भार के निर्मूलन के लिए दोहदकारी हुआ है।

अंबा के विषय में भीष्म के साथ युद्ध की तैयारी करना और देवताओं के कारण युद्ध न कर अंबा को छोडकर चले जाना आदि

विषय परशुराम के जीवन में साधारण विषय जैसे ही दिखाई देते हैं। सच तो यह है कि इन कारणों के पीछे भी गहरा अर्थ छिपा हुआ है।

न इधर का न उधर का

काशी राजा की पुत्रियाँ है अंबा, अंबिका, अंबालिका। युक्त वयस्क आने पर उनके लिए राजा ने स्वयंवर प्रकट किया। भीष्म उस स्वयंवर में गए। वहाँ सारे राजपुत्रों को हरा कर तीनों राजकुमारियों को अपने भाई विचित्र वीर की पत्नियों के रूप में ले आए। इस प्रकार राजकुमारियों का बलवानों की संपत्ति हो जाना तो उस समय की प्रथा ही थी। उन तीनों में बड़ी राजकुमारी अंबा ने कहा कि उसने साल्व को चाहा है इस कारण विचित्रवीर्य से वह विवाह नहीं कर पायेंगी। भीष्म इस बात को सुनते ही अंबा को सम्मानपूर्वक रथ में चढ़ा कर साल्व के पास भिजवा देते हैं। भीष्म के आधीन होने का बहाना लेकर साल्व ने अंबा को स्वीकार नहीं किया। अंबा लौटकर भीष्म से विनती करती है कि उनका विवाह वीर्य के साथ ही हो। लेकिन दूसरों से प्रेम करने वाली अंबा को अपने भाई के साथ विवाह करवाने के लिए भीष्म सहमत नहीं हुए।

अंबा इधर साल्व को भी नहीं पा सकी वहाँ विचित्रवीर्य की पत्नी भी नहीं बन पायी। इस प्रकार दोनों ओर से हार पानेवाली अंबा अपनी इस दशा के लिए भीष्म को ही दोषी ठहराती है। फिर उनसे बदला लेना चाहा। अंबा ने अकृतव्रण द्वारा परशुराम के आगमन की खबर पाकर, उनके आने तक वहीं खडी होकर परशुराम के आते ही उनके पैरों पर गिर पड़ी और अपनी व्यथा उनसे कह डाली। अंबा की सारी बातें सुनने के बाद परशुराम को उसकी दशा पर दया आयी। परशुराम ने पूछा आखिर तुम्हें क्या चाहिए? अंबा ने कहा आप ऐसा कीजिए कि ''भीष्म

मेरी बात मान जाय!'' तब परशुराम ने भीष्म को बुलाया और आदेश दिया कि उसकी इच्छा की पूर्ति करे। परशुराम ने सोचा कि यह तो मेरे ही शिष्य हैं मेरी बात टालेंगे नहीं। गुरू की आज्ञा पाकर भी अधर्म कार्य करने के लिए भीष्म ने अपनी सहमती नहीं दी। तब परशुराम ने युद्ध के लिए तैयार होने के लिए भीष्म को आह्वानित किया। उस युद्ध में इन दोनों ने निरूपित किया कि गुरु-शिष्य दोनों समान हैं। जय-अपजय की बात समझ में नहीं आ रही थी। इस बीच देवता लोग आए और उस युद्ध को समाप्त कर पाए। परशुराम ने सोचा कि वे कुछ नहीं कर सकते। इस कारण अंबा को छोड़कर महेंद्रगिरि वापस लौट गए।

अंबा शिखंडी बनकर जन्म ली

महाभारत की कथा जितनी ऐतिहासिक है उतनी ही प्रतीकात्मक भी है। आखिर काशी राजा की पुत्रियों के लिए ये नाम क्या है? वे तीन ही क्यों हुई? उनमें बड़ी अंबा, भीष्म के तिरस्कार के कारण उनसे बदला लेने के लिए शिव की तपस्या कर भीष्म की मृत्यु के लिए कारण कैसी बनी? ये ही शिखंडी के रूप में पुनर्जन्म पायी। जब अंबा के रूप में थी, तब के क्रोध को शिखंडी के रूप में जन्म लेकर पूरा कर पायी। अंबा के विषय में परशुराम दया दिखाकर भीष्म से अंबा के खातिर युद्ध करना, ये सब शिष्य की धर्मनिष्ठा को, पराक्रम को समाज के सामने प्रकटित करने के लिए ही हुए हैं। अगर यह बात नहीं है तो फिर जय-अपजय की बात जाने बिना युद्ध की समाप्ति नहीं होती, और अंबा को इस प्रकार छोड़कर जाना भी होता। अंबा के विषय के बारे में उनको तो जानकारी रही होगी। जानने पर भी जब अंबा ने आकर उनकी सहायता मांगी तो मना कैसे कर सकते हैं? भीष्म की बात भी क्या उन्हें नहीं मालूम? मालूम है। उस बहाने भीष्म के साथ युद्ध कर अपने को थोड़ा

बहुत घटा कर ही सही, शिष्य के बडप्पन को लोक के सामने प्रकटित करना ही उस गुरु का उद्देश्य है। उत्तम गुरु के बारे में बड़े लोग तो कहते ही हैं, ''शिष्यादिच्छेत् पराजयम्।''

किसमें भगवान नहीं है

इस प्रकार भगवान स्वरूप परशुराम के जीवन के अनेक विषय हमें प्रेरित करते हैं। सच्चाई समझ में आ जाय तो संपूर्ण विश्व ही भगवत स्वरूप हो जाता है। इस चराचर जगत में कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है, जो भगवान नहीं है। कुछ जड़, कुछ चेतन रूप में दिखाई देते हैं। बस इतना ही है। जड़ जगत से बढ़कर चेतन जगत में भगवद्विभूति अधिक नजर आती है। उसमें भी अल्प प्राण से बढ़कर महान प्राणों में यह महत्व अधिक दृग्गोचर होता है। इनमें भी महान पुरुषों में भगवद्विभूति अत्यधिक रूप से दिखाई देती है, इस कारण उन्हें अवतार पुरुष मानकर उनकी आराधना की जाती है। इस दृष्टि से देखे तो परशुरामावतार सभी आस्तिक भक्त जनों के लिए आराध्य सिद्ध होता है।

* * *